श्री आत्म-वल्लभ-समुद्र गुरुभ्यो नमः

नगरकोट-कांगड़ा

महातीर्थ

साहित्य वाचस्पति भँवरलाल नाहटा

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री आत्म-वल्लभ-समुद्र गुरुभ्यो नमः

नगरकोट - काँगड़ा महातीर्थ

(एक शोध)

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

लेखक व सम्पादक :
साहित्य वाचस्पति श्री भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :
श्री सोहनलाल कोचर, एडवोकेट
प्रबन्ध संचालक
पूज्य बंसीलालजी कोचर शतवार्षिकी
अभिनन्दन समिति
८६, कैनिंग स्ट्रीट, कलकत्ता-१

मूल्य : रु० २५.०० (पच्चीस रुपये)

मुद्रक :
राज प्रोसेस प्रिन्टर्स
८, ब्रजदुलाल स्ट्रीट
कलकत्ता-७०० ००६

Nagarkot-Kangra Mahatirtha —BHANWARLAL NAHTA

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

यद्यपि हिमाचल प्रदेश स्थित काँगड़ा पुरातन नाम नगरकोट का जैन मन्दिर कई शताब्दियों तक कालगर्त में छुपा रहा, तथापि वर्तमान में तपा-गच्छाधिपति परम पूज्य श्री श्री १००८ श्रीमद् विजयानंद सूरिजी महाराज (प्रसिद्ध नाम आचार्य आत्मारामजी महाराज) व उनकी परम्परा में उनके पट्टधर पूज्य आचार्य श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज के भागीरथ प्रयत्नों द्वारा इस विस्मृत तीर्थ का उद्धार किया गया। इस संदर्भ में जैन भारती महत्तरा साध्वी श्री मृगावती श्री जी महाराज के अथक प्रयास की भूमिका भी अपनी एक विशिष्ट स्थान रखती है। उनकी प्रेरणा से सन् १९७८ के चर्तुमास में कांगड़ा दुर्ग में विराजित प्रथम तीर्थङ्कर श्री आदिनाथ भगवान की अत्यन्त चमत्कारी एवं प्रगट प्रभावी प्रतिमा की सेवा पूजा का अधिकार पुरात्तत्व विभाग से स्थायी रुप से मिला।

वर्तमान में काँगड़ा तीर्थ को उत्तरी भारत का शत्रुञ्जय तीर्थ कहा जा रहा है और वैसे भी परमपूज्य आचार्य विजय वल्लभ-समुद्र-इन्द्रदिन्न सद्गुरुओं के प्रताप व इनके द्वारा किये गये सत् प्रयत्नों ने पंजाब के जैन समुदाय को एक ऐसी अनुकरणीय प्रेरणा दी कि आज इस पुरातन तीर्थ में स्थित प्रथम तीर्थङ्कर आदीश्वर भगवान् की प्रतिमा उस नैसर्गिक सौन्दर्य में निर्मित विशाल भवनों के परकोटे में भक्त-जनों को धर्म-कर्म की और अग्रसर होने के लिये प्रत्येक क्षण उत्साहित करती है।

जैन समाज विशेषतः पंजाब का जैन समाज परम पूज्य आचार्य १००८ श्री विजयानंदसूरीश्वरजी का सदा ही ऋणी रहेगा। जिनके उपदेशों से समूचे पंजाब में अध्यात्मिक उन्नति के लिए मन्दिरों उपाश्रयों व शैक्षणिक विकास के लिए स्कूलों एवं कालेजों की स्थापना संभव हुई। वस्तुतः विक्रम संवत् १६८२ में आचार्य पद पर श्री विजयसिंहसूरि विराजमान हुये थे, किन्तु कालान्तर में कुछ ऐसी अव्यवस्था आयी कि भारत का जैन संघ किसी भी व्यक्ति को आचार्य पद न दे सका। पंजाब केसरी आचार्य श्री १००८ श्री विजयानंदसूरीश्वरजी महाराज को उनकी विद्वता और चतुर्दिक गुणवत्ता को भली प्रकार परखने के पश्चात् ही २६० वर्ष के अंतराल के पश्चात् विक्रम संवत् १९४३ की मार्गशीर्ष बदी पंचमी के दिन आचार्य पदवी से विभूषित

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

किया गया। उनकी परम्परा के आचार्यों ने उनके नैतिक मूल्यों की ज्वाला को प्रज्वलित रखा व आज का काँगड़ा तीर्थ एक महान् विशिष्ट एवं नैसर्गिक सौन्दर्य का प्रतीक बन गया है। कलि-काल कल्पतरु पंजाब केसरी परम पूज्य आचार्य भगवंत श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज ने पुरातत्त्वाचार्य श्री जिन विजयजी द्वारा सम्पादित "विज्ञप्ति त्रिवेणी" ग्रन्थ के आधार पर कांगड़ा तीर्थ की खोज प्रारम्भ की थी व विक्रम सम्वत १९८० में होशियारपुर (पंजाब) से छरी पालित पद यात्रा संघ लेकर कांगड़ा तीर्थ पधारे थे।

हमारे विशेष अनुरोध पर जैन-साहित्य, संस्कृति व धर्म के प्रकाण्ड विद्वान् साहित्य वाचस्पति श्री भंवरलालजी नाहटा ने नगरकोट तीर्थ सम्बन्धी शोध कार्य करके अपने अथक प्रयत्नों से यह पुस्तक लिखी है। उनका यह कार्य स्तुत्य है। उन्हें हमारा साधुवाद।

हमारे पूज्य पिता प्रातः स्मरणीय स्वर्गीय बंसीलालजी कोचर (प्रसिद्ध नाम श्री बंसीलालजी लुंगीवाला) का यह जन्म शताब्दी वर्ष है, उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए यह पुस्तक उन्हीं की स्मृति में प्रकाशित की जा रही है। वे वर्षों से आचार्य श्री १००८ विजय वल्लभ सूरीश्वरजी महाराज के सम्पर्क में रहे व उनकी प्रेरणा से उन्होंने अपने प्रिय मित्र स्वर्गीय रोशनलालजी कोचर के साथ अमृतसर में दादाबाड़ी की स्थापना का कार्य किया, व श्री रोशनलालजी कोचर के देहावसान के पश्चात् वे स्वयं गुरु महाराजों की प्रेरणा व कृपा से वर्षों तक दादाबाड़ी को निरन्तर विकसित करते रहे व धर्मानुरागी श्रावकों के साथ धर्म-कर्म करते रहे। ९ जनवरी १९७५ को प्रभु नाम स्मरण करते हुये उन्होंने अपनी देह त्याग दी। उनकी सद्भावना, भाईचारा की प्रवृति एवं दीन दुखियों की सेवा भावना हम सबको अनुकरणीय हो, इस भावना के साथ यह पुस्तक जैन श्री संघ को सादर भेंट।

सोहनलाल कोचर
ट्रस्टी
बी० दौलत चेरिटेबल ट्रस्ट
कलकत्ता-७००००१

कलकत्ता
अक्षय तृतीया
सं० २०४८

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

		पृष्ठ
नगरकोट-कांगड़ा महातीर्थ		१
श्री नगरकोट महातीर्थ चैत्य परिपाटी —श्रीजयसागर महोपाध्याय		२०
श्री नगरकोट वीनती		२४
श्री नगरकोट चैत्य परिपाटी (सं० १४९७)		२८
श्री नगरकोट आदिनाथ स्तवनम् (सं. १५६५)	श्री साधुवद्धन	३१
श्री नगरकोट आदीश्वर स्तोत्र (सं० १६३४)	कविकनकसोम	३७
तीर्थराजीस्तव के चार श्लोक	श्री जयसागर उपाध्याय	४२
नगरकोट वीनती	श्री अभयधर्म गणि	४४
नगरकोट मंडण आदीश्वर गीतम्	श्री साधुसुन्दर	५०
संघपति वीकमसिंह रास	श्री मुनिभद्र	५२
श्री नगरकोट्टालंकार आदिजिन स्तवनम्	कवि मेघराज	६७
श्री वीरतिलक चौपाई	कवि देदु	७४
नगरकोट जालपा परमेश्वरी स्तवनम्	कवि हर्षकीर्त्ति	७७
सुशर्मपुरीयनृपति वर्णन इतिहास		८०
नगरकोट काँगड़ा की जालंधरी मुद्राएं		९१
सुशर्मपुरीय नृपति वर्णन छन्द	कवि जयानन्द	९३
प्रतिपरिचय, आचादिनकर रचना उल्लेख		११५
संघपति नयणागर राससार		११८
संघपति नयणागर रास		१२१
संघपति लोढ़ा खीमचन्द रास		१२७
रास सार		१३५

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य श्री बंसीलालजी कोचर

जन्म : ६ जनवरी, १८९२

देहावसान : १ मार्च, १९७५

उन्नीसवी सदी के अन्तिम दशक में अमृतसर के एक धर्मभीरू परिवार में आपका जन्म हुआ। आपके पिताश्री पू० प्रेमसुखदासजी कई वर्ष पहले व्यापार हेतु अमृतसर आ बसे थे। आपकी बाल्यावस्था में ही आपके पिताश्री का निधन हो गया था एवं अपने बड़े भ्राता पू० भैरूँदानजी की देख रेख में आपने अपने व्यापार का संचालन किया। प्रारम्भिक कई असफलताओं के पश्चात् आपने एक जैन मुनि से नवकार मन्त्र की महिमा समझी व तत्पश्चात जो मार्ग दर्शन आपको मिला उसने आपको एक धर्म परायण, सहृदय व दानी इन्सान बनाया व दीन दुःखियों की सेवा के लिये प्रत्येक क्षण अग्रसर किया। वर्षों पहले ही आपने लूँगी उत्पादन हेतु अमृतसर में एक विशाल हाथ करघा उद्योग की स्थापना की व आप 'बंसीलाल लूँगीवाला' नाम से प्रसिद्ध हुए। आप परमपूज्य प्रातःस्मरणीय आचार्य विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज के परम भक्त थे व उनके सदुपदेश से अमृतसर में जैन दादाबाड़ी की स्थापना का बीड़ा उठाया। तत्पश्चात उनके पट्टधर शांतमूर्ति आचार्य समुद्रविजयजी महाराज के आशीर्वाद से दादाबाड़ी के कार्यों को सुसम्पन्न किया।

आपने अपना पूरा जीवन धर्माराधना करते हुए व्यतीत किया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

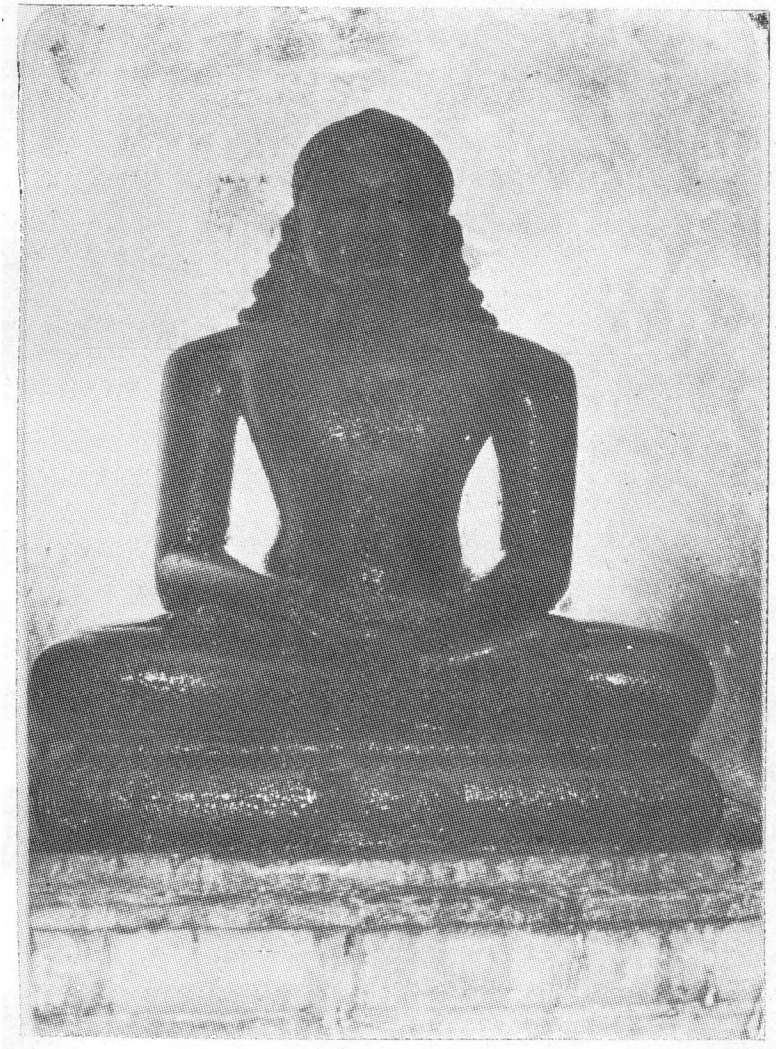

नगरकोट कांगड़ा के जिनालय के मूलनायक
भगवान आदिनाथ की भव्य प्रतिमा

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

खरतरगच्छ नायक श्री जिनेश्वरसूरि (द्वितीय)
और सा० विमलचन्द

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

'दशनी-डयोढ़ी' मंदिर के पिछले भाग के खण्डहर

नगरकोट कांगड़ा तीर्थ का मनोरम दृश्य

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विजय वल्लभ स्मारक
चतुर्मख जिनालय–मूलनायक भगवान्
श्री वासुपुज्य स्वामी

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिनशासनरत्न शान्ततपोमूर्ति
राष्टसन्त आचार्य
श्रीमद् विजय समुद्र सूरीश्वर जी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

न्यायाम्भोनिधि पजाब देशोद्धारक

जैनाचार्य

श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वर जी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

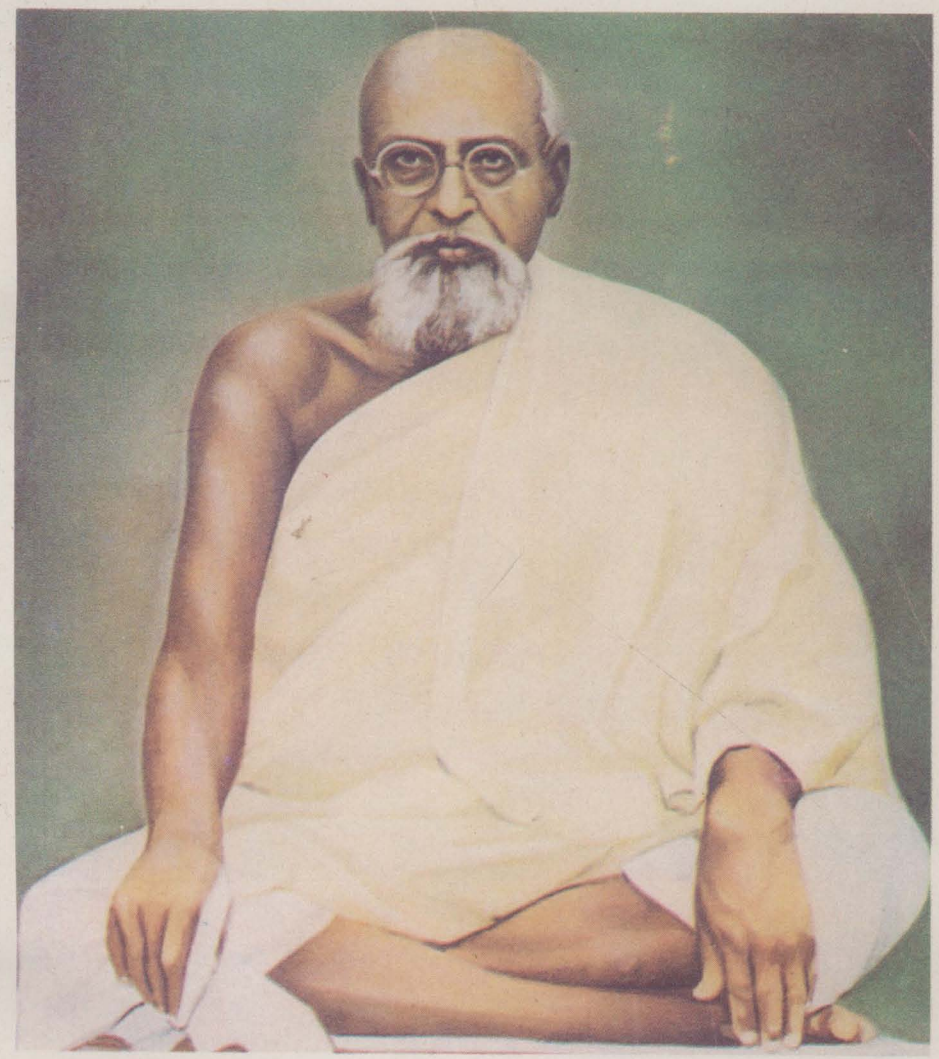

कलिकालकल्पतरु पंजाबकेसरी
युगवीर आचार्य
श्रीमद् विजय वल्लभ सूरीश्वर जी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनदिवाकर परमारक्षत्रियोद्धारक
वर्तमान गच्छाधिपति आचार्य
श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वर जी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महत्तरा साध्वी मृगावतीश्री जी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

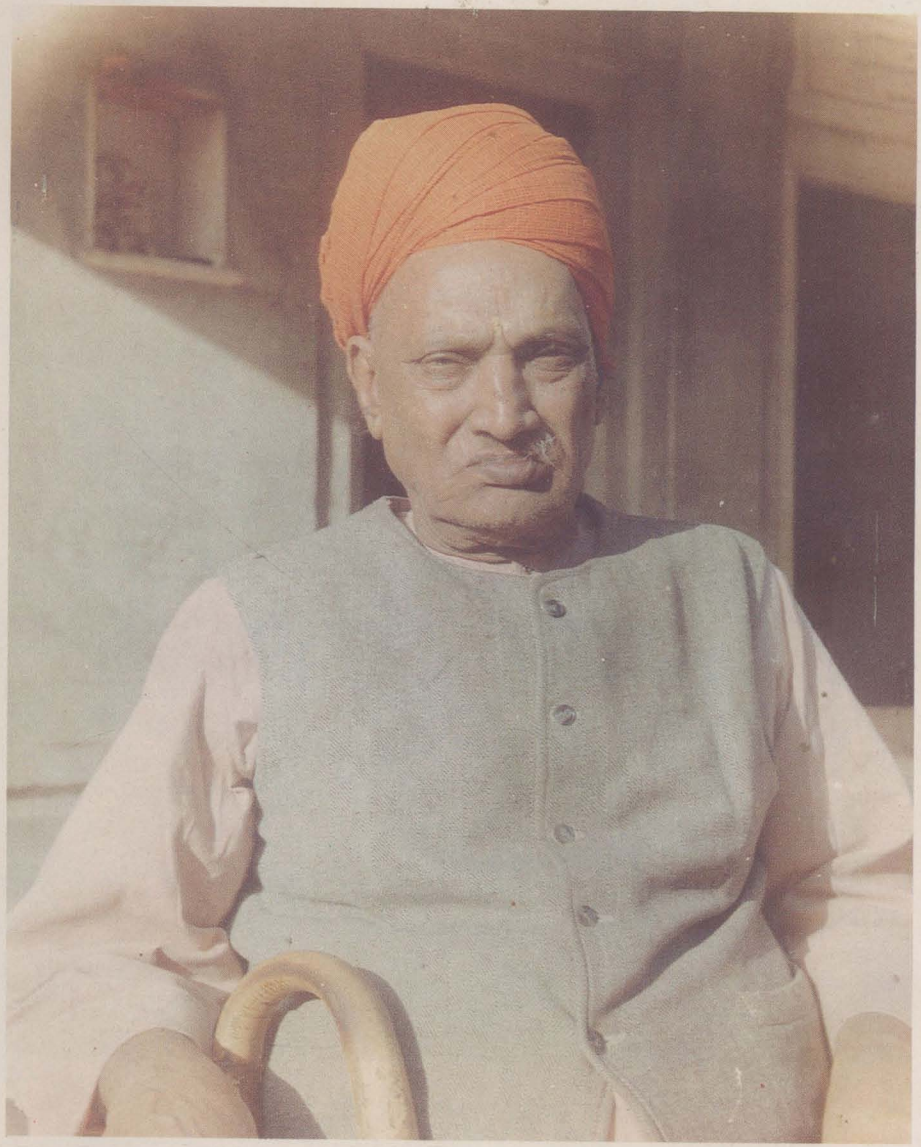

स्वर्गीय बंसीलालजी कोचर 'लूंगीवाला'

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नगरकोट—कांगड़ा महातीर्थ

हिमालय की गोद में प्राकृतिक रमणीय वर्तमान हिमांचल प्रदेश में नगरकोट कांगड़ा श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय का अति प्राचीन व चमत्कारी तीर्थ है। नगर के दक्षिणवर्ती भाग में पर्वत की चोटी पर एक प्राचीन विशाल किला है जिसके दोनों ओर माझी एवं बाणगंगा नामक नदियाँ बहती हैं। यह नगर व आस-पास का प्रदेश किसी जमाने में जैन धर्मावलम्बियों का गढ़ था। जन श्रुति के अनुसार यह नगर/तीर्थ महाभारत कालीन है। महाभारत युद्ध में कौरवों की ओर से लड़ते हुए अर्जुन से परास्त होने पर सोमवंशी कटोच गोत्रीय राजा सुशर्मचन्द्र जिसका मूल स्थान मुल्तान (सिंध) था, ने इसे बसाया। राजा सुशर्मचन्द्र जैन धर्म में पूरी आस्था रखता था एवं अम्बिकादेवी इस वंश की कुल देवी के रूप में पूजित थी। भगवान नेमिनाथ के समकालीन राजा सुशर्मचन्द्र ने कई जैन मन्दिर बनवाये व अनेक रत्नों की प्रतिमाऐं प्रतिष्ठित की थी। अम्बिका देवी की सहायता से किले पर श्री आदि जिन ऋषभदेव का मन्दिर बनवाया। प्रारम्भ में कांगड़ा का नाम राजा सुशर्मचन्द्र ने अपने नाम पर सुशर्मपुर रक्खा था। यह कांगड़ा जिला जालंधर या त्रिगर्त देश के अन्तर्गत था। महमूद गजनी के आक्रमण से पूर्व का इतिहास केवल काश्मीर के इतिहास को अवलोकन करने पर जो कुछ सामने आता है उससे यह सिद्ध होता है कि पूर्व के ६०० वर्ष अर्थात् ई० सन् ४७० से महमूद गजनवी तक यह त्रिगर्त देश ही कहलाता था। सन् १००९ में गजनी ने आक्रमण किया व मन्दिरों आदि को नष्ट कर प्रचुर धन-सम्पदा ऊँटों पर लाद कर गजनी ले गया। समय परिवर्तन के साथ जालंधर/त्रिगर्त देश का भी बँटवारा होकर कुछ भाग हिमाचल प्रदेश में और कुछ पंजाब में चला गया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महमूद गजनवी के आक्रमण काल से अब तक का इतिहास जो प्राप्य है उससे जो तथ्य सामने आते हैं उनके अनुसार सं० १००९ में गजनी द्वारा हिन्दु व जैन राजाओं को पेशावर में परास्त कर नगरकोट का किला अधिकार में कर लिया गया पर ३५ वर्ष बाद पहाड़ी आदिवासियों ने दिल्ली की सहायता से किले को पुनः हस्तगत कर लिया एवं कटोच वंशीय राजा का राज्य पुनः कायम हुआ। यहाँ की अखूट धन सम्पदा पर हमेशा मुसलमानों की नजर रही। सन् १३६० में कांगड़ा के राजा संसारचन्द्र पर फिरोजशाह तुगलक ने चढ़ाई कर अपनी आधीनता स्वीकार करवाली। संसारचन्द्र राजा के रूप में कायम रहा पर वहाँ के मन्दिरों की धन सम्पदा एक बार फिर लूटी गई। सर कनिंघम ने संसारचन्द्र की जगह रूपचन्द्र को इस समय राजा माना है जो कि भ्रांति मात्र है। तत्पश्चात् ई० स० १५५६ में मुगलबादशाह अकबर ने कांगड़ा किले को अपने अधिकार में ले लिया। उस समय के राजा धर्मचन्द्र ने दिल्ली बादशाह अकबर को कर देना मंजूर कर अपनी गद्दी कायम रक्खी। ई० सन् १७७४ में सिखों के प्रधान जयसिंह ने अपने छल-प्रपंच द्वारा किले को ले लिया व संसारचन्द्र (द्वितीय) को सन् १७८५ में सौंप दिया। सन् १८०५ से १८०९ तक यह क्षेत्र गोरखों की लूटपाट का केन्द्र बना रहा। आखिर लाहौर के राजा रणजीतसिंह ने गोरखों को हराकर संसारचन्द्र द्वितीय को पुनः राज सिंहासन पर आरूढ़ किया। ई० सन् १८२४ में संसारचन्द्र की मृत्यु के पश्चात् अनुरुद्धचन्द्र राज्य का अधिकारी हुआ। पर ३/४ वर्षों में ही संसार से विरक्त हो हरिद्वार चला गया व अपने पुत्र रणवीर को राज्य भार सौंप दिया। रणजीतसिंह ने आक्रमण कर कुछ भाग ले लिया व सन् १८२९ में किले पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार कांगड़ा में सोमवंशी कटोच गोत्रीय राजपूत राजाओं के राज्य का सूर्यास्त हो गया।

कंगदक या कांगड़ा राज्य घनी आबादी वाला क्षेत्र था जहाँ ज्यादातर जैन धर्मावलम्बी थे। अनेक मन्दिर, धर्मस्थल हर गांव नगर में थे जो कि

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मुसलमानी काल में नष्ट प्रायः हो गये। आज भी खुदाई में यत्र तत्र तीर्थङ्करों व अन्य जैन देवी देवताओं की प्रतिमाएं पूर्ण व खंडित रूप में प्राप्त है व देवी देवता (क्षेत्रीय) रूप में पूजित हैं।

आज सही हालत में प्राचीन जैन मन्दिर कोई नहीं रहा है और जैन धर्म के अनुयायी भी अन्यमती बन चुके हैं।

चैत्य परिपाटी आदि प्राचीन प्रमाणों के आधार पर जो मन्दिर थे, उनकी सूची इस प्रकार है।

१. नगरकोट (शहर) में

१—साह विमलचन्द्र द्वारा निर्मित शांतिनाथ जिनालय जो खरतरवसही नाम से प्रसिद्ध था। प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा आचार्य जिनेश्वरसूरि द्वारा प्रह्लादनपुर में वि० सं० १३०९ माघ शुक्ला १० को हुई।

२—महावीर स्वामी जैन मन्दिर—स्वर्णमयी प्रतिमा। मन्दिर राजा रूपचन्द्र द्वारा निर्मित सोवन वसती कहलाता था।

३—पेथड़साह द्वारा सं० १३२५ में निर्मित पेथड़ वसती आदि जिन मन्दिर।

(किले में) —सुशर्मचन्द्र द्वारा निर्मित आदियुगीन आदिनाथ भगवान का मन्दिर जो गिरीराजवसही के नाम से विख्यात है।

—राजा रूपचन्द्र द्वारा १४वीं शताब्दी में निर्मित आलिग वसति जिन मन्दिर जिसमें २४ तीर्थङ्करों की रत्नमय प्रतिमाएँ थीं।

२. गोपाचलपुर : इसका वर्तमान नाम गुलेर है। सं० धिरिराज द्वारा निर्मापित विशाल शान्तिनाथ जिनालय।

३. नन्दवनपुर : यह व्यास नदी के तट पर स्थित है। यहाँ महावीर भगवान का जिनालय।

४. कोटिलग्राम : श्री पार्श्वनाथ जिनालय

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५. कोठीपुर : यह चहुँ ओर पहाड़ों से घिरा स्थान है। यहाँ महावीर भगवान का मन्दिर व जैनों की घनी आबादी थी।

६. देपालपुर पत्तन : वर्तमान में देवालपुर। यहाँ कई जिन मन्दिर थे।

वस्तुतः सारे जालंधर त्रिगर्त में प्रायः हर गांव में मन्दिर थे। उपरोक्त तो केवल जो यात्री संघ के मार्ग में पड़ते थे उनका विवरण है। इनके अलावा इन्द्रापुर के पार्श्वनाथ जिनालय, नन्दपुर के शांतिनाथ जिनालय, सिंहनद में पार्श्वनाथ जिनालय, तलपाटक में पार्श्वनाथ जिनालय, लाहड़-कोट में जिनमन्दिर, कीरग्राम (बैजनाथ पपरोला) जो कांगड़ा से ३५ मील दूर स्थित है—में महावीर स्वामी का मन्दिर, किला नूरपुर में किले के अन्दर विशाल जैन मन्दिर जो अभी ध्वस्त अवस्था में है। यह पठानकोट से ९ मील पर है। वहाँ भी जैन यात्री संघ के जाने का उल्लेख प्राप्त है। ढोलबाहा-जिनौड़ी-यह होशियारपुर के निकट है यहाँ अनेक जैन मन्दिर थे। खंडहरों से प्राप्त अनेक जिन प्रतिमाएं आदि होशियारपुर के विश्वेश्वरानन्द वैदिक संस्थान में सुरक्षित हैं।

जैन मंदिरों एवं इनसे सम्बन्धित इतिहास की जानकारी के लिए आवश्यक है कि समय-समय पर गये यात्री संघ, साधु समुदाय जिन्होंने इसके लिए प्रेरणा दी व संघ में साथ गये, द्वारा रचित स्तवन, रास, सज्झाय, विज्ञप्तिपत्र आदि जो उपलब्ध हैं उनका विस्तृत मनन करें। अतः उपलब्ध सामग्री पर विस्तार पूर्वक विवेचन किया गया है जो कि प्राप्त इतिहास की आधार शिला है।

महोपाध्याय जयसागर

पन्द्रहवीं शताब्दी के महान् प्रभावक और विद्वानों में महोपाध्याय जयसागर जी का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है आप दरड़ा गोत्रीय आसराज के पुत्र और आबू खरतरवसही के निर्माता सं० मंडलिक आदि के भ्राता थे। आपने बाल्यकाल में श्री जिनराजसूरि जी से दीक्षा ली तब आप का नाम

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिनदत्त से जयसागर हो गया। आपका जन्म सं० १४४५-५० के बीच और दीक्षा सं० १४६० के आस पास होनी चाहिए। श्रीजिनवर्द्धनसूरि जी आपके विद्यागुरु थे तथा पीछे से गच्छ भेद हो जाने से आप श्री जिनभद्रसूरि-जी के आज्ञानुवर्त्ती रहे और उन्होंने आपको संवत् १४७५ में उपाध्याय पद दिया था। सं० १४८४ में आप सिंध-पंजाब में विचरे और नगरकोट महातीर्थादि की यात्रा की थी जिसका विशेष वर्णन आपने विज्ञप्ति-त्रिवेणी में किया है। सं० १४८७ में आपके सानिध्य में शत्रुंजयादि महातीर्थों का यात्री संघ सं० मंडलिक ने निकाला व दूसरी बार सं० १५०३ में यात्री संघ निकाला। आपने गुजरात राजस्थान पंजाब के अनेक तीर्थों की यात्रा की थी जिनका वर्णन तीर्थमाला—चैत्य परिपाटी संज्ञक रचनाओं में मिलता है। सं० १५११ की प्रशस्ति में जो हमारे ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह में प्रकाशित है—में आपकी जीवनी की महत्वपूर्ण घटनाएँ निर्दिष्ट है।

उज्जयन्त शिखर पर नरपाल संघपति ने "लक्ष्मीतिलक" नामक विहार बनाना प्रारंभ किया तब अम्बादेवी, श्रीदेवी आपके प्रत्यक्ष हुई। सैरिसा पार्श्वनाथ जिनालय में भी श्री शेष पद्मावती सह प्रत्यक्ष हुआ था। मेवाड़ के नागद्रह के नवखण्डा पार्श्वनाथ चैत्य में श्री सरस्वती देवी आप पर प्रसन्न हुई थी। श्री जिनकुशलसूरि जी आदि देव भी आप पर प्रसन्न थे आपने पूर्व में राजगृह नगर उद्दड़विहारादि, उत्तर में नगरकोट्टादि पश्चिम में नागद्रहादि की राजसभाओं में वादी वृन्दों को परास्त कर विजय प्राप्त की थी। आपने सन्देहदोलावली वृत्ति, पृथ्वीचन्द्र चरित, पर्वरत्नावली, ऋषभ-स्तव, भावारिवारण वृत्ति एवं संस्कृत प्राकृत के सहस्रों स्तवनादि बनाए। अनेकों श्रावकों को संघपति बनाए और अनेक शिष्यों को पढ़ाकर विद्वान बनाए।

आपकी शिष्य परम्परा भी विशिष्ट महत्वपूर्ण थी। आपके प्रथम शिष्य मेघराज गणि कृत नगरकोट आदिनाथ हारबंध स्तोत्र विज्ञप्ति-त्रिवेणी

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

के बीच प्रकाशित है। सोमकुंजर कृत खरतरगच्छ पट्टावली (गा० ३०) एवं जेसलमेर संभवनाथ जिनालय प्रशस्ति (सं० १४९७) प्रकाशित है।

आपका स्वर्गवास सं० १५१५ के आसपास अनुमानित है। आप महोपाध्याय पद प्रतिष्ठित थे अतः तत्कालीन विद्वानों और उपाध्यायों में सर्वोच्च थे। आपकी रचनाएँ प्रचुर परिमाण में उपलब्ध हैं।

श्री जयसागरोपाध्याय के चित्र भी उपलब्ध हैं। हमारे संग्रह के त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र के कुछ पत्रों में आपके परिवार—भाई और भौजाइयों के चित्र हैं। आपका चित्र भी आचार्य महाराज के साथ है जो संभवतः जिनवर्द्धनसूरि या जिनभद्रसूरि का संभव है, क्योंकि सं० १४७५ में प्राप्त उपाध्याय पद उसमें प्रयुक्त है। श्री पूरणचंद्रजी नाहर के संगृहीत प्रति में भी आपका चित्र है।

गणिवर्य श्री बुद्धिमुनिजी से प्राप्त स्वर्णाक्षरी कल्पसूत्र की प्रशस्ति हमने "मणिधारी अष्टम शताब्दी ग्रन्थ में प्रकाशित की थी जो श्री जयसागरोपाध्याय रचित है और उसमें आबू खरतरवसही निर्माता अपने भ्राता मण्डलिक के परिवार का विशद् वर्णन है और हमारे सम्पादित ऐतिहासिक जैनकाव्य संग्रह में भी जयसागरोपाध्याय प्रशस्ति है जिसमें महोपाध्याय जी के जीवनी पर महत्वपूर्ण विशद् वर्णन प्राप्त है।

महातीर्थ नगरकोट-कांगड़ा को प्रकाश में लाने का श्रेय जयसागरोपाध्यायकृत 'विज्ञप्ति-त्रिवेणी' संज्ञक विज्ञप्तिपत्र को है। जो उपाध्याय जी ने महान् शासनप्रभावक आचार्य प्रवर श्रीजिनभद्रसूरिजी महाराज को सिंध प्रान्त के मम्मणवाहण स्थान से अणहिलपुर पाटण को भेजा था जिसमें इस तीर्थयात्रा का विशद् वर्णन है। खरतरगच्छ में यह प्रथा पूर्वकाल से चली आ रही थी यह पत्र सं० १४८४ के माघ सुदि १० को लिखा गया था तो इससे अर्द्धशताब्दी पूर्व सं० १४३० का 'विज्ञप्ति महालेख' भी लोकहिताचार्य को श्री जिनोदयसूरिजी द्वारा प्रेषित है जिनमें पूर्व देश की यात्रा

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

का वर्णन है। पुरातत्त्वाचार्य श्री जिनविजयजी ने बहुत से विज्ञप्तिपत्रों का संग्रह सिंघी ग्रन्थमाला से प्रकाशित किए हैं। इस विज्ञप्ति-त्रिवेणी को तो आपने सन् १९१६ में आत्मानन्द सभा, भावनगर से प्रकाशित करवाया था जिसमें विस्तृत प्रस्तावना और हिन्दी सार भी बड़ा उपयोगी और अनेक ज्ञातव्यों से परिपूर्ण ग्रंथ था। अब वह अनुपलब्ध है अतः विज्ञप्ति-त्रिवेणी का अति सक्षिप्त सार यहाँ दे रहे हैं।

श्री जिनभद्रसूरिजी के आदेश से श्री जयसागरोपाध्याय, मेघराज गणि, सत्यरुचि गणि, पं० मतिशील गणि और हेमकुंजर मुनि आदि शिष्यों के साथ सिन्ध प्रान्त में विचरते हुए सं० १४८३ का चातुर्मास 'मम्मणवाहण' नगर में किया था। चातुर्मास के पश्चात् सं० सोमाक के पुत्र सं० अभय चन्द्र ने महातीर्थ मरुकोट्ट (मरोट) की यात्रा के लिए संघ निकाला। उपाध्यायजी भी संघ के साथ यात्रा कर वापस मम्मणवाहण पधारे। फरीद पुर के श्रावकों की विनती स्वीकार कर द्रोहडोट्टादि गाँवों में होते हुए फरीदपुर पहुँचे। अनेक धर्म कार्य हुये, उपाध्यायजी के उपदेश से अनेक ब्रह्म क्षत्रिय और ब्राह्मणादि भी जैन धर्मानुयायी हुए। एक दिन व्याख्यान के पश्चात् किसी आगन्तुक यात्री से नगरकोट महातीर्थ के सम्बन्ध में जानकारी मिली कि यह सुशर्मपुर श्री आदिनाथ स्वामी का प्राचीनतम तीर्थ है और वर्त्तमान में मुसलमानों द्वारा अनेक तीर्थस्थल नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर भी वह अखण्डित और सप्रभाव है।

तीर्थ का वर्णन सुनकर उपाध्यायजी ने फरीदपुर निवासी सेठ राणा के सोमचन्द्र, पार्श्वदत्त और हेमा नामक पुत्रों को उपदेश दिया। उन्होंने संघ निकालने की तैयारी की और ग्रामान्तरों में आमंत्रण पत्र भेज दिए। इसी बीच उपाध्यायजी को माबारखपुर के श्रावक अपने गांव में ले गए जहाँ १०० घर श्रावकों को बस्ती थी। वहाँ अनेक धर्म कार्य हुए, सा० शिवराज ने अपने पिता हरिचंद सेठ के साथ आदि जिन की प्रतिष्ठा उपाध्याय जी के कर कमलों से कराई और संघवात्सल्य दिया। फरीदपुर से सा०

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

रामा सा० सोमा, सा० हेमा, सा० देवा और दस्सू आदि श्रावक भी आए थे जो कार्य समाप्ति के बाद उपाध्यायजी को अपने साथ अपने नगर ले गए। वहाँ से ज्योतिषी द्वारा दिए शुभ मुहूर्त्त में सा० सोमा के संघ ने प्रस्थान किया। विपासा (व्यासा) नदी पार कर अनेक मार्गवर्त्ती गांवों को उल्लंघन कर निश्चिन्दीपुर के पास आकर सरोवर के किनारे संघ ठहरा। वहाँ के लोग संघ दशनार्थ आए तो वहाँ का राजा सुरत्राण (सुलतान) भी अश्वारूढ़ होकर अपने दीवान के साथ आया। उपाध्यायजी के उपदेश से प्रभावित होकर साधुओं को स्तुति-प्रणाम कर संघपति सोमा को सम्मानित कर अपने स्थान को लौटा। संघ वहाँ से क्रमशः तलपाटक पहुंचा, देवपालपुर का संघ गुरुवन्दनार्थ आया और संघ को अपने यहाँ ले जाने का आग्रह करने लगा। पर संघ ने आगे प्रयाण किया और व्यासा के किनारे किनारे चलता हुआ मध्य देश में पहुँचा। एक दिन, एक ओर से खोखरेश यशोरथ के सैन्य का और दूसरी ओर से सिकन्दर के सैन्य का कोलाहल सुनकर संघ घबरा गया और वापस लौटकर व्यासा को नौकाओं से पार कर कुंगुद घाट से होकरमध्य, जांगल, जालन्धर और कश्मीर इन चार देशों की सीमा के मध्यवर्ती हरियाणा नामक स्थान में पहुँचा। कानुक यक्ष के मन्दिर के निकट निरुपद्रव स्थान में पड़ाव डाला और शुभ मुहूर्त्त में चैत्र सुदि ११ को नाना प्रकार के बाजित्रों के बजने पर सोमा सेठ को संघपति पद दिया। मल्लिकवाहन के सं० मागट के पौत्र और सा० देवा के पुत्र उद्धर को महाधर पद एवं सा० नीवा, सा० रूपा, और सा० भोजा को भी महाधर पद दिया गया। सैल्लहस्त का पद बुच्चास गोत्रीय सा० जिनदत्त को समर्पण किया। पांच दिन तक गर्जन-तर्जन, वर्षा तूफान और ओलों के उपद्रव के पश्चात् छठे दिन संघ का प्रयाण हुआ। सपादलक्ष पर्वत की सघन झाड़ियों और तंग घाटियों को पार करते हुए व्यासा के तट पर पहुंचा। मार्गवर्ती नगरों गांवों के लोकों और अधिपतियों से मिलता हुआ क्रमशः पातालगंगा के तट

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पर पहुँचा। नदी पार कर क्रमशः पहाड़ों की चोटियों को उल्लंघन कर के दूर से स्वर्णमय कलश-मण्डित प्रासादों की पंक्तिवाले नगरकोट-सुशर्मपुर को देखा। बाणगंगा नदी पार कर नगर में जाने की तैयारी कर रहे संघ के स्वागतार्थ वहाँ के नागरिक और जैन समुदाय ने आकर वाजित्रों की विविध ध्वनि और जयजयकार के साथ यात्री संघ का नगर में प्रवेश कराया। नगर के प्रसिद्ध प्रसिद्ध मुहल्लों व बाजारों में से होकर साधु क्षीमसिंह के बनवाये हुए शान्तिनाथ जिनालय के सिंहद्वार पर पहुँचा। यहाँ के मूल नायक शांतिनाथ स्वामी की प्रतिमा खरतरगच्छ के आचार्य श्री जिनेश्वर सूरिजी की प्रतिष्ठित थी। सं० १४८४ के ज्येष्ठ सुदि ५ के दिन यह यात्रा फलवती हुई। यहाँ से श्री संघ ने राजा रूपचन्द के बनवाये हुये मन्दिर में जाकर सुवर्णमय महावीर बिम्ब को वन्दन किया फिर तीसरे ऋषभदेव जिनालय में दर्शन वन्दन कर अपना मानव जन्म सफल किया। संघ के उतरने और विश्राम करने की व्यवस्था की गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल नगर के पार्श्ववर्त्ती पहाड़ी पर स्थित अनादि युगीन, अति प्रभावशाली श्री आदिनाथ स्वामी के प्राचीन और सुन्दर जिनालय की यात्रा करने के लिए संघ ने प्रस्थान किया। संघपति मार्ग में याचक गणों को इच्छित दान देता हुआ जा रहा था। किले में जाने के लिए राजमहलों के बीच में होकर जाना पड़ता था। इसलिए राजा नरेन्द्रचन्द्र ने अपने कर्मचारियों को संघ के लोगों को बेरोक टोक आने देने की आज्ञा देदी। साथ में हेरंब नामक एक आत्मीय कर्मचारी को किले का मार्ग बताने के लिए भेजा। इस मार्गदर्शक के साथ राजभवनों के मध्य होकर क्रमशः सात दरवाजों को पार कर संघ ने किले में प्रवेश किया। मार्ग में संघ को देखने के लिए राजकीय व प्रजाजनों की भीड़ लगी हुई थी। संघने श्री आदिनाथ भगवान के मन्दिर में जाकर भक्ति पूर्वक दर्शन किये। मुनियों ने विविध प्रकार से स्तवना [१] कर भाव पूजा की और श्रावकों ने

१. उपाध्यायजी के शिष्य मुनि मेघराज कृत २४ पद्यों वाला हारबन्ध स्तोत्र विज्ञप्ति त्रिवेणी में है, जिसे आगे दिया जा रहा है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भाव पूजा के साथ साथ प्रचुर फल-फूल नैवेद्यादि द्वारा द्रव्य पूजा कर अपनी आत्मा को निर्मल बनाया।

नगरकोट-कांगड़ा के वृद्धजनों ने संघ के यात्रियों को तीर्थ का माहात्म्य बतलाते हुए कहा कि—यह महातीर्थ श्रीनेमिनाथ स्वामी के समय सुशर्म नामक राजा ने स्थापित किया था और आदिनाथ भगवान की प्रतिमा किसी के द्वारा घड़ी हुई न होकर स्वयंभू-अनादि है। इसका बड़ा भारी अतिशय आज भी प्रत्यक्ष है। भगवान की चरण सेविका शासनदेवी अम्बिका है, इसके प्रक्षालन का पानी चाहे वह एक हजार घड़ों जितना हो तो भी भगवान के प्रक्षालन के पानी के साथ पास-पास होने पर भी कभी नहीं मिलता। मन्दिर के मूल गर्भगृह में कितना ही स्नात्र जल क्यों न पड़ा हो, बाहर से दरवाजे ऐसे बंद कर दिए जाएं कि चींटी भी प्रवेश न कर सके, तो भी क्षण मात्र में सारा पानी सूख जायगा। ऐसे बहुत से प्रभाव आज भी इस महा-तीर्थ के प्रत्यक्ष हैं। इस तीर्थ महिमा गुणगान के भक्ति सिक्त वातावरण में राजा नरेन्द्रचन्द्र ने अपने प्रधान-पुरुषों को भेजकर संघ सहित उपाध्याय श्री जयसागरजी को बहुमान पूर्वक बुलाया। यह राजा विशुद्ध क्षत्रिय, न्यायवान, सुशील, सद्गुणी और धर्म प्रेम से ओत प्रोत था। इसका कुल सोमवंशीय नाम से प्रसिद्ध था, इसने सपादलक्ष पर्वत के पहाड़ी राजाओं को पराजित करके उन्हें गत गर्व किया था। श्वेताम्बर साधुओं पर इसका बड़ा प्रेम और आदर था। अपने महल में पूर्वजों द्वारा स्थापित आदिनाथ प्रतिमा का यह परमोपासक था। राजा के बुलाने पर संघ सहित उपाध्याय जी राजसभा में पधारे। उसने मस्तक नमा कर उन्हें वन्दन किया, बदले में उपाध्याय जी ने धर्मलाभ दिया।

राजसभा में सब के यथायोग्य स्थान पर बैठ जाने के बाद राजा ने कुशल प्रश्नादि पूछे फिर स्वयं उपाध्याय जी के साथ विद्वद् गोष्ठी करने लगा। साथ में अन्यान्य ब्राह्मण-क्षत्रियादि भी वार्त्तालाप करने लगे। एक काश्मीरी विद्वान कुछ देर शास्त्रार्थ भी करता रहा। उपाध्यायजी की

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्वत्ता और वाक् चातुरी से राजा और राजसभा सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए और जैन विद्वानों की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। इसके बाद राजा ने अपना देवागार दिखलाया जिसमें स्फटिक रत्नादि विविध पदार्थों की बनी हुई तीर्थंकर आदि अनेक देवों की मूर्तियां विराजित थीं। इस प्रकार दिन का अधिकांश भाग बिताकर संध्याकालीन प्रतिक्रमणादि क्रिया-काण्ड के हेतु उपाध्यायजी ने अपने स्थान पर जाने की इच्छा प्रकट की। राजा ने आदरपूर्वक, फिर पधारने के निवेदन सहित संघकीय मंडली को विदा किया।

सप्तमी के दिन संघ की ओर से नगर और किले के चारों मन्दिरों में महापूजा रचाई गई। मन्दिरों को गर्भागार से लेकर ध्वजादण्ड तक, बहुमूल्य ध्वजा पताकाओं से सजाये गए। भगवान के सम्मुख नाना प्रकार के फल-फूल, पक्वान्न नैवेद्यादि भेंट किये गए। स्थान स्थान पर बाजे वजने लगे, नृत्य होने लगे, स्त्रियां मंगल गीत गाने लगीं। संघपति ने गरीब से लेकर धनाढ्य तक—सभी को प्रीति भोजन करवाया। अष्टमी के दिन श्री शान्तिनाथ जिनालय में बड़े ठाठ के साथ नन्दी की रचना की गई और मेघराजगणि, सत्यरुचि गणि, मतिशील गणि, हेमकुंजर मुनि और कुलकेशरि मुनि को उपाध्यायजी ने पंचमंगल महाश्रुतस्कन्ध की अनुज्ञा दी। एवं दश दिन तक नगरकोट्ट में संघ ने स्थिति की। वहां के जीदो, वीरो, हर्षो, चंभो, संभो, गंभो आदि श्रावकों ने उपाध्यायजी को चातुर्मास रहने के लिए बहुत कुछ आग्रह किया। ग्यारहवें दिन सकल संघ एकत्र होकर फिर समस्त मन्दिरों में गया और भक्ति-गद्गद् स्वर से परमात्मा की प्रार्थना करता हुआ प्रास्थानिक चैत्यवन्दन कर वापस रवाना हुआ।[1] अनेक पहाड़ों,

१. विज्ञप्ति-त्रिवेणी में ज्वालामुखी, जयन्ती, अम्बिका और लंगड़ा वीर का उल्लेख किया है। यतः

ज्वालामुख्या जयन्त्या च श्रीमदम्बिकया तथा।
वीरेण लङ्गडाख्येन यदसेवि सदैव हि ॥१॥
संसार सागरोत्तार तीर्थात्तीर्थात्तमात्ततः।
श्रीमन्नगरकोटा ख्यात् प्रस्थिताः सह सार्थिकैः ॥२॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नदियों, और जंगलों को पीछे छोड़ता हुआ गोपाचलपुर-तीर्थ को पहुँचा। वहां पर सं० गिरिराज के बनाये हुए विशाल और उच्च मन्दिर में विराजमान श्री शान्तिनाथ भगवान के दर्शन-वंदन किए। वहाँ पर पांच दिन मुकाम करके फिर आगे चले और विपाशा के तट पर बसे हुए नन्दवनपुर में संघ ने श्रीमहावीर स्वामी के सुन्दर मन्दिर में प्रभु-दर्शन किए। वहां से कोटिल-ग्राम पहुँच कर श्री पार्श्वनाथ [२] भगवान की यात्रा की। वहां से फिर पर्वतों-घाटों और शिखरों को उल्लंघन कर कोठीनगर में श्री महावीर देव के दर्शन किए। इस गांव में बहुसंख्यक श्रावक थे अतः दश दिन पर्यन्त ठहरना पड़ा। सं० सोमा ने यहां पर सारे संघ को प्रीतिभोज दिया और नाना प्रकार के वस्त्राभूषणादि द्वारा साधर्मिक बन्धुओं को सत्कृत किया। ग्यारहवें दिन यहां से प्रयाण करके चलते हुए कुछ दिन सप्तरुद्र जलाशय के महाप्रवाह वाले जलमार्ग को नौकाओं द्वारा ४० कोश पार किया और सुखपूर्वक देवपालपुर पत्तन को संघ पहुँचा। वहाँ के कॅवला गच्छीय सं० घटसिंह आदि और खरतर गच्छीय सा० सारंग आदि श्रीमान् श्रावकों ने संघ का बड़े भारी समारोह के साथ नगर प्रवेश कराया। यहां भी कोठीपुर की तरह साधर्मिकवात्सल्य आदि संघ सत्कार संघपति महाधर आदि ने सोत्साह प्रेमपूर्वक किए। यहाँ के संघ ने तो उपाध्यायजी को चातुर्मास हेतु आग्रह किया तो क्षेत्र की योग्यतानुसार मेघराज गणि, सत्यरुचि गणि, कुल-केसरि मुनि और रत्नचन्द्र क्षुल्लक-इन चार शिष्यों को चातुर्मास करने के लिए छोड़ दिए और दश दिन आनन्दपूर्वक व्यतीत कर संघ ने फरीदपुर की ओर प्रयाण किया। जाते समय जो दृश्य दृग्गोचर हुए थे वे फिर देखते हुए विपाशा नदी को पीछे छोड़कर पहले मुकाम वाले मैदान में जा पहुंचे। फरीदपुर के लोग स्वागताथं सामने आये। सं० सोमा के भाई पासदत्त—हेमाने नागरिकों और यात्रियों को सम्मानित किया।

२. उपाध्यायजी ने यहाँ पंच वर्ग परिहारमय ७ श्लोकों द्वारा स्तवना की जो विज्ञप्ति त्रिवेणी में प्रकाशित हैं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उपाध्यायजी महाराज ने सं० १४८४ का चातुर्मास मम्मणवाहण में व्यतीत किया। पर्यूषण के दिनों में अनेक श्रावक श्राविकाओं ने मासक्षमण आदि बड़े बड़े तप किए। चातुर्मास के पश्चात् पौष महीने में नन्दिमहोत्सव किया गया और तीन साधु, चार श्रावक और २४ श्राविकाओं ने तपश्चरण और नाना अभिग्रह धारण किए। नगरकोट से आते समय देवपालपुर में मेघराज गणि आदि जिन चार साधुओं को चातुर्मास हेतु छोड़ आए थे वे भी उपाध्यायजी के समीप आ पहुँचे।

विज्ञप्ति-त्रिवेणी का यात्रा वर्णन प्रकाश में आने पर वर्त्तमान में यह महातीर्थ प्रकाश में आया पर इतः पूर्व की स्थिति पर प्रकाश डालना आवश्यक है। चैत्यवास के युग में सुविहित साधुओं के विचरण के अभाव में उस समय के इतिहास को प्रकाश में लाने का साधन अनुपलब्ध है। सुविहित शिरोमणि श्रीहरिभद्रसूरि जैसे धुरन्धर आचार्यों ने शिथिलाचार का तीव्रविरोध किया श्री वर्द्धमानसूरि-श्री जिनेश्वरसूरि ने दुर्लभराज की सभा, अंणहिलपुर पाटण में जाकर उनसे लोहा लिया और शास्त्रार्थ विजेता होकर खरतर विरुद प्राप्त कर शुद्ध साध्वाचार को प्रतिष्ठित किया उनकी परम्परा में जिनवल्लभसूरि—जिनदत्तसूरि, मणिधारी जिनचन्द्रसूरि व जिन पतिसूरि आदि ने उस ज्योति को प्रज्वलित रखा। श्री जिनवल्लभसूरि के शिष्य जिनशेखर की रुद्रपल्लीय परम्परा तो शताब्दियों तक विचरती रही हो पर उपर्युक्त महान् आचार्यों ने जनता को प्रतिबोध देकर लाखों की संख्या में ओसवाल—श्रीमाल महत्तियाण आदि जातियों में श्री वृद्धि की। खण्डेलवाल, माहेश्वरी व ब्राह्मणादि को भी जैन धर्मावलम्बी बनाया। राजगच्छ आदि कई परम्पराओं के छिटफुट उल्लेख पाये जाते हैं पर व्यवस्थित इतिहास का अभाव है। इसी परिप्रेक्ष्य में श्रीजिनपतिसूरिजी के नगरकोट कांगड़ा पधारने पर सं० १२७१ में राणाश्री आसराज आदि बहु संख्यक लोगों ने वृहद्द्वार में सन्मुख आकर स्वागत किया और मुनि मण्डल सहित आचार्यश्री के नगरकोट पधारने पर ठ० विजय श्रावक ने बड़े भारी समारोह के साथ सूरिजी का प्रवेशोत्सव किया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जनता में आनंद छा गया, धर्मोपदेशों की झड़ी लगने से मिथ्या दृष्टि गोत्र देवतादि का पूजन परिहार हुआ। नन्दी महोत्सवादि अनेक प्रकार के धर्मकृत्य हुए। सूरिजी नगरकोट के आस पास दो वर्ष तक विचरे। सं० १२७३ में पं० मनोदानंद नामक काश्मीरी पण्डित आये, शास्त्रार्थ का आह्वान होने पर महाराजाधिराज श्री पृथ्वीचंद्र की राजसभा में श्री जिनपालोपाध्याय आदि शिष्यों को श्री जिनपतिसूरिजी ने भेजा और पण्डित को शास्त्रार्थ में पराजित कर व जयपत्र सहित बड़े समारोह पूर्वक लौटे। युगप्रधानाचार्य गुर्वावली में इस प्रसंग का विशद वर्णन है। श्री चंद्रतिलकोपाध्याय कृत अभयकुमार चरित्र प्रशस्ति का निम्न श्लोक भी इस विषय पर प्रकाश डालता है—

भूयो भूमि भुजंग संसदि मनोनानंद विप्रंधना,
हंकारो द्धुर कन्धर सुविदुरं पत्रावलंब प्रदम्
जित्वा वाद महोत्सवे पुरिवृहद्द्वारे प्रदर्श्योच्चकै
र्युक्ति संघ युतं गुरुं जिनपतिं यस्तोषयामासिवान् ।।३७।।

आचार्य महाराज नगरकोट और तन्निकटवर्त्ती प्रदेशों में अनेक स्थलों में विचरे होंगे और के प्रवास में अनेकों भव्यात्माओं को प्रतिबोध दिया होगा। नगरकोट के राजा जैन थे और नगर में चार मन्दिरों में एक जिनालय जिसका नाम खरतरवसही था, का निर्माण भी आपके उपदेश से ही हुआ होगा। सेठ विमलचंद आपके ही कुटुम्ब के थे जिनका व्यापारिक सम्बन्ध पंजाब, दिल्ली, गुजरात में सर्वत्र था। इन दो वर्षों के क्रिया कलापों का वर्णन गुर्वावली में कुछ भी नहीं लिखा गया।

आपका अज्ञानुवर्त्ती साधुसंघ व पट्टधर श्री जिनेश्वरसूरि (द्वितीय) भी उधर विचरण करते रहे मालूम देता है क्योंकि देदाकृत श्री वीरतिलक चौपई के अनुसार नगरकोट निवासी वीरउ सोनार आपका परम भक्त था जिसके अनशन लेकर स्वर्गस्थ होने का वर्णन प्राप्त है जो आगे दिया गया है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सं० १२७७ में आषाढ सुदि १० को श्री जिनपतिसूरि का स्वर्गवास हो जाने पर उनके पट्ट पर श्रीजिनेश्वरसूरि (द्वितीय) बैठे। उनका मुनि मण्डल वहां चातुर्मास करता रहता, श्रावकों का भी आवागमन रहता। संघ यात्रा, प्रतिष्ठादि में पूर्ण योगदान रहता था। सं० १३०६ मिती माघ सुदि १० को श्री शान्तिनाथ, अजितनाथ, धर्मनाथ, वासुपूज्य, मुनिसुव्रत, श्री सीमंधर स्वामी आदि प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा सा० विमलचंद, हीरा आदि समुदाय ने कराई थी। गुर्वावली में लिखा है कि नगरकोट के प्रासाद में प्रचुर द्रव्यव्यय करके सेठ विमलचंद ने प्रभु शांतिनाथ प्रतिष्ठित कराये। अजितनाथ भगवान की जन साधारण ने, धर्मनाथ स्वामी की विमलचंद सेठ के पुत्र क्षेमसिंह ने, श्री वासुपूज्य स्वामी की समस्त श्राविकाओं ने, मुनिसुव्रत स्वामी की गोष्ठिक देहड़ ने, सीमंधर स्वामी की गोष्टिक हीरा ने तथा पद्मनाभ प्रभु की प्रतिष्ठा महा भावसार हाला ने पालनपुर में कराई। श्री अभयतिलकोपाध्याय कृत ताड़पत्रिय द्व्याश्रय काव्य वृत्ति में सेठ विमलचंद का चित्र भी प्राप्त है। प्रशस्ति का २१ वां श्लोक देखिये।

श्री प्रल्हादनपत्तने जिनपतिं शान्ति प्रतिष्ठापया
चक्रेसूरि जिनेश्वरै स्तदनुयः संस्थापयामासिवान्
प्रासादे प्रवरे सुशर्मनगरे मन्ये प्रतिष्ठा जये
स्वं प्रापय्य ततः सुशर्मनगरे संस्थापयत् शिवे ॥२१॥

सं० १४८४ में श्री जयसागरोपाध्याय जब संघ सहित यात्रार्थ पधारे तो वहां के दर्शन कर इतना आनंद मिला कि शरीर रोमाञ्चित हो गया। प्यासे को मानो सुधारस मिला हो, ऐसी अनुभूति हुई। सेठ विमलचंद के पुत्र सेठ क्षीमसिंह कारित प्रासाद में खरतर गच्छ नायक श्री जिनेश्वरसूरि प्रतिष्ठित शान्तिनाथ स्वामी को ज्येष्ठसुदि ५ के दिन वन्दन किया। अन्य जिनालयादि का चमत्कारिक वर्णन जानने के लिए 'विज्ञप्ति-त्रिवेणी' देखना चाहिए। उस समय वहाँ शान्तिनाथ जिनालय के अतिरिक्त २ राजा रूपचन्द का बनवाया हुआ स्वर्णमय प्रतिमा वाला महावीर स्वामी का

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मन्दिर और तीसरा युगादि जिन ऋषभदेव स्वामी का और चौथा मन्दिर कांगड़ा तो ऊँचे दुर्ग पर ऋषभदेव स्वामी का प्राचीनतम जिनालय था जिसका निर्माण नेमिनाथ भगवान के समय राजा सुशम ने कराया था। उस समय वहाँ का राजा नरेन्द्रचन्द्र था जो स्वयं जैन था और उसके चैत्यालय में रत्नमय जिन प्रतिमाएँ थीं जिनके दर्शन जयसागरोपाध्याय ने किए थे।

तेरहवीं, चौदहवीं शताब्दी में बीजापुर में जैन धर्म की बड़ी जाहोजलाली थी। युगप्रधानाचार्य गुर्वावली एवं ताड़पत्रीय ग्रन्थ प्रशस्तियों में वासुपूज्य विधि चैत्य की प्रतिष्ठाओं अनेक देवकुलिकाओं के निर्माण, दण्ड-ध्वजारोप आदि के उल्लेख पाये जाते हैं। उन सब देवकुलिकाओं में अधिष्ठायक वीरतिलक की प्रतिष्ठा कब हुई, यह अन्वेषणीय है। सं० १२८४ में बीजापुर में श्री वासुपूज्य स्वामी की स्थापना-प्रतिष्ठा हुई। मिती आषाढ़ सुदि २ को अमृतकीर्ति, सिद्धिकीर्ति, चारित्रसुन्दरी और धर्मसुन्दरी की दीक्षा हुई थी। सं० १२८५ ज्येष्ठ सुदि २ को कीर्तिकलश व उदयश्री की दीक्षा हुई। ज्येष्ठ सुदि ९ को विद्याचन्द्र, अभयचन्द्र गणि की दीक्षा हुई। सं० १३१७ आषाढ़ सुदि ११ को वहां के मन्त्री ने वासुपूज्य विधिचत्य पर स्वर्णकलश, स्वर्णदण्ड ध्वजारोपण आदि विशेष रूप से करवाये थे। इन्हीं उत्सवों के समय वीरतिलक की प्रतिष्ठा की गई हो, यह संभव है।

जयसागरोपाध्याय कृत नगरकोट महातीर्थ चैत्य परिपाटी में नगरकोट कांगड़ा के उपर्युक्त चार मन्दिर के सिवा चार और स्थान मिलाकर पचतीर्थ बतलाया है। जैन धर्म में अनेकों तीर्थों के पास पंचतीर्थियों की बड़ी महिमा है। यह प्रथा प्राचीन काल से चली आती है। नगरकोट पंचतीर्थी में दूसरा गोपाचलपुर था जिसमें शान्तिनाथ जिनालय तीसरा नंदवण (नांदौन) था, जहाँ महावीर जिनालय, चौथा कोटिल में पार्श्वनाथ स्वामी और पाँचवाँ कोठीनगर में स्वर्णमय कलशों वाला वीर प्रभु का मंदिर था। कांगड़ा के आदिनाथ जिनालय में अम्बिकादेवी होने के प्राचीन उल्लेख पाये जाते हैं। विज्ञप्ति-त्रिवेणी में ज्वालामुखी, जयन्ति-

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अम्बिका और लंगड़ा वीर का उल्लेख है। चैत्य परिपाटी में वीर लंगड़ को 'वीर लउकड़' लिखा है। पंचनदी साधना गीतादि में वर्णित 'खोड़िया खेत्रपाल' यही लगता है। प्रश्न यह है कि ५२ वीरों के अन्तर्गत और खेतल नाम से उल्लिखित वीरतिलक ही लंगड़ वीर, खंज या खोड़िया क्षेत्रपाल न हो ? नगरकोट के वीरा सोनार को क्षेत्रपाल हो जाने पर पंजाब में भी मान्य किया गया हो, यह असम्भव नहीं किन्तु श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज ने तो उसे 'वीरतिलक' नाम देकर विज्जलपुर-बीजापुर के वासुपूज्य जिनालय में ही विराजमान किया था।

सं० १४९७ में रचित नगरकोट चैत्य परिपाटी में १ राजा सुशर्म का आदिनाथ जिनालय, २ आलिगवसही में मणिमय २४ बिम्ब, ३ रायविहार राजा रूपचंद कारित महावीर स्वामी ४ श्रीमाली धिरिया का पार्श्वनाथ जिनालय, ५ खरतर विधि प्रासाद में शान्तिनाथ जिनालय का उल्लेख है। जयसागरोपाध्याय की विज्ञप्ति-त्रिवेणी व चैत्यपरिपाटी के तेरह वर्ष पश्चात् ही यह चैत्यपरिपाटी बनी है जिसमें एक मन्दिर अधिक है। आलिग वसही के २४ बिम्बों में आदिनाथ स्वामी को मूलनायक मान लेने से श्रीमाल धिरिया का पार्श्वनाथ जिनालय ही बाद में बना प्रमाणित होता है। कनकसोम कृत आदीश्वर स्तोत्र में आदिनाथ शांतिनाथ और महावीर जिनालय का उल्लेख किया है पर साधुसुन्दर ने केवल आदीश्वर भगवान का ही स्तवन बनाया है।

सतरहवीं शताब्दी के बाद धीरे-धीरे मन्दिर लुप्त होते गये मालूम देते हैं। डा० बनारसीदास जैन के "जैन इतिहास में कांगड़ा" (जैन प्रकाश वर्ष १० अंक ९) के अनुसार अम्बिका देवी के मन्दिर के दक्षिणओर दो छोटे छोटे मन्दिर है जिनके द्वार पश्चिम की ओर हैं। एक में तो केवल पाद-पीठ रह गया है जो किसी जैन मूर्ति का होगा। दूसरे में आदिनाथ भगवान की बैठी प्रतिमा है, इसके पीठ पर एक लेख खुदा है जो अब मध्यम पड़ गया है। कनिंघम साहब ने इसमें सं० १५२३ पढ़ा है जो महाराज संसारचन्द्र प्रथम का समय था। यह काली देवी के मन्दिर में कनिंघम साहब ने एक लेख के छाप ली थी जिसपर "ओंस्वस्तिश्री जिनाय

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नमः" लिखा था, अब वह लेख गुम हो गया है। इसमें सं० १५६६ का लेख है जो विज्ञप्ति-त्रिवेणी के पश्चात्वर्त्ती है।

इन्द्रेश्वर मन्दिर में दो प्राचीन जैन प्रतिमाएँ डचौढी में लगी हुई है। एक प्रतिमा का लेख लौकिक सं० ३० (ई० सन् ८५४) का ८ पंक्ति का विज्ञप्ति-त्रिवेणी में प्रकाशित है, प्राचीन कांगड़ा के बाजार में इन्द्रेश्वर मंदिर के पास एक ऋषभदेव स्वामी की प्रतिमा है जो भैरव मूर्ति नाम से पूजी जाती है। योगीराज श्री ज्ञानसारजी ने भी इस प्रतिमा का उल्लेख जिन प्रतिमा स्थापित ग्रन्थ में किया है। जिसका लेख—

(१) ओम् सवत् ३० गच्छे राज कुले सूरि भू च (द)—
(२) भयचंद्रः (।) तच्छिष्यो (ऽ) मलचन्द्राख्य (स्त)—
(३) त्पदा (दां) भोजषटपदः (।।) सिद्धराजस्ततः ढङ्ग—
(४) ढङ्गादजनि (च) ष्टकः। रल्हेति गृहि (णी) (त)—
(५) (स्य) पा-धर्म—यायिनी। अजनिष्ठां सुतौ।
(६) (तस्य) ां (जैन) धर्मध (प) रायणी। ज्येष्ठः कुंडलको
(७) (भ्र) ा (ता) कनिष्ठः (कुमाराभिधः। प्रतिमेयं (च)
(८) —जिना ···नुज्ञया। कारिता·····(।।)

अर्थात्—ओम् संवत् ३० वें वर्ष में—राजकुल गच्छ में अभयचंद्र नामके आचार्य थे जिनके शिष्य अमलचन्द्र हुए। उनके चरण कमलों में भ्रमर के समान सिद्धराज था। उसका पुत्र ढंग हुआ। ढंग से चष्टक का जन्म हुआ। इसकी स्त्री राल्ही थी··· उसके धर्म परायण दो पुत्र हुए। जिनमें से बड़े का नाम कुण्डलक था और छोटे का नाम कुमार।·····की आज्ञा से यह प्रतिमा बनाई गई है।

नगरकोट से २३ मील पूर्व बैजनाथ के मन्दिर में सूर्यदेव के पादपीठ पर जो वस्तुतः महावीर स्वामी की प्रतिमा का पादपीठ है, पर सं० १२९६ में देवभद्रसूरि द्वारा प्रतिष्ठा का उल्लेख है[1] यह स्थान पहले कीरग्राम था।

१—१ ओं० सवत् १२९६ वर्षे फाल्गुण बदि ५ रवौ श्री कीरग्रामे ब्रह्म क्षत्र गोत्रोत्पन्न व्यव० भानू पुत्राभ्यां व्य० दोल्हण-आल्हणाभ्यां स्वकारित श्रीमहावीरदेव चैत्ये २ श्री महावीर जिन मूल बिंब 'आत्म श्रेयो (र्थे) कारित'। प्रतिष्ठितं च श्री जिनवल्लभसूरि संतानीय रुद्रपल्लीय श्रीमदभयदेवसूरि शिष्यैः श्रीदेवभद्र सूरिभिः

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भटनेर के संघपति वीकमसी नाहर ने वड़ गच्छीय आचार्य भद्रेश्वर सूरि के समय नगरकोट का यात्री संघ निकाला था, उस समय कांगड़ा के राजा संसारचंद्र थे। उस समय संघ ने नगरकोट के वीरप्रभु जिनालय आदिनाथ, शान्तिनाथ जिनालयों की पूजा की और कांगड़ा के आदिनाथ और अम्बिका मन्दिर की पूजा करने का उल्लेख किया है। इस पन्द्रहवीं शती के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक रास को इस ग्रन्थ में दे रहे हैं।

विद्वद्वर्य श्री हीरालाल जी दुग्गड़ ने "मध्य एशिया और पंजाब में जैन धर्म" के पृ० १७२ में लिखा है कि श्री अभयदेवसूरि नवांगी टीकाकार के समकालीन आचार्य गुणचंद्रसूरि जो वज्री शाखा के चन्द्र गच्छ के आचार्य श्री अभयदेवसूरि के शिष्य थे और विक्रम की बारहवीं शताब्दी में हो गये हैं। उन्होंने जालंधर कांगड़ा प्रदेश में विचरण कर अनेक वादियों को जीता था और जैन धर्म का प्रचार-प्रसार भी किया था जिसका वर्णन इस प्रकार है—

श्रीमान् श्रीवज्रमूलः प्रबलतर महोत्तुंगशाखा शताढ्याः सतेजः।
साधु-संघादिपदल पटलोग्रौर कीर्त्ति प्रसूनः॥
शश्चद्वांद्यातिरक्तं फल निवयमलं पुण्य भाजां।
प्रयच्छतु गच्छे स चन्द्रगच्छेरद्ये जगति विजयते कल्पवृक्षः॥१॥
तस्मिन् प्रभुः श्री गुणचंद्र नामः सूरीश्वरः संयमिनां धुरीणः।
वभूव जालंधर पत्तनेपि यो वादि वृंदं निखिलं जिगाया॥२॥

वस्तुतः ये नवांगी वृत्तिकार अभयदेवसूरि के शिष्य ही थे जिनकी आचार्य पद के अनन्तर देवभद्रसूरि नाम से प्रसिद्धि हुई। तत्कालीन गन्थों में चंद्रकुल वज्र शाखा नाम ही प्रयुक्त किया गया था उस समय इस सुविहित परम्परा के अनेक आचार्य हुए हैं जो सभी प्रान्तों में विचरण करते थे।

अब इस तीर्थाधिराज के स्तवन जो विविध यात्राओं के समय विद्वानों द्वारा निर्मित हैं, अर्थ सहित दिये जा रहे हैं।

अत्यधिक जानकारी हेतु 'विज्ञप्ति त्रिवेणी' एवं श्री हीरालाल दुग्गड़ लिखित 'मध्य एशिया और पंजाब में जैन धर्म' देखें।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जयसागर महोपाध्याय कृत

श्री नगरकोट-महातीर्थ-चैत्य परिपाटी

मुझ मनि लागिय खंति **जालंधर** देसह भणिय।
तीरथ वंदण रेसि **नयरकोटि** तउ आवियउ ॥१॥

बाणगंगा पातालगंग व्याह नइ जसु तडिहिं।
वणराई घण घाट वाट ति घाटिहिं आगलिय ॥२॥

तहिं महिमा भडार पहिलउं पहिलइ जिण भवणि।
दीठउ **संतिजिणिंद** नयण अमिय रस पारणउं ॥३॥

जिणहर बीजइ रीजु मन अधिकेरउं ऊपजए।
जहि सोवनमय बिंब **रूपचंद** रायह तणउं ॥४॥

जिणि दीठइ संतोसु मण आणंदिहिं ऊससए।
अंधारइ उद्योत जयउ सुजगगुरू वीरवरू ॥५॥

जइ त्रीजइ प्रासादि सरवरि राजमराल जिम।
संभाविउ **रिसहेसु** चंपकि चंदनि थुति जलिहिं ॥६॥

हिव चडियउ चमकंत अति ऊंचइ गढि **कांगडए**।
इहु जाणे मइ किद्धु सिद्धिसिला आरोहणउ ॥७॥

अलजउ अंगि न माइ माइ ताय घरु वीसरिय।
सरिय सयल मह कज्ज तहिं रिसहेसर दंसणिहिं ॥८॥

जो हीमालय हुंत राय **सुसर्म्मिहिं** जाणियउ।
नेमिसरि जयवंति, कंगड-कोटिहिं आणियउ ॥९॥

चंद्रवंसि जे राय राणी जसु पयतलि लुलइ।
अंबिकदेवि पसाइ तहिं मन वंछित फल मिलइं ॥१०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भास ।

कंचणमय कलसिहिं सहिय ए च्यारइ प्रासाद ।
च्यारइ चिहुं वरणिहिं नमिय च्यारइ हरइं विषाद ।
गोपाचलपुर सिरि मउड **संतिनाह** जग सामि ।
कामिय फल कारणि रसिय लीणउ छउं तसु नामि ॥११॥

नंदवणिहिं नंदउ सुचिरु चरम जिणेसर चंद ।
जग चकोरु जसु दंसणिहिं पामइ परमाणंद ॥
पास पसंसउ **कोटिलए** गामिहिं महि अभिरामि ।
मह मन कोइलि जिम रमउ तस गुण अंबारामि ॥१२॥

हेमकुंभ सिरि जिण भवणि ए सवि थुणिया देव ।
देवालइ **कोठिनयरि** करउं **वीरजिण** सेव ।
दुक्खह दिन्नु जलंजलिय सुखह लद्धु पसारु ।
तीरथ पंचइ जइ नमिय पामिय मोख दुयार ॥१३॥

मंगल तीरथ पंथियह मंगल तीरथ पंथ ।
ज सुखेहिं किर मइ कलिय मुकति नारि सीमंथ ।
नारि अछइ घरि घरि घणिय जणणी सा परु धन्न
जासु कुक्खि उप्पन्न नरु संचइ तीरथ पुन्नु ॥१४॥

इय **जयसागर** समरिय ताय, सवालख पव्वय जिणराय ।
ता अम्हारिय पूगी आस, हउं बोलउं जिण सासण दास ॥१५॥
इणि समरणि नासइ नरग जोग, इणि समरणि लाभइ सरग भोग ।
इणि कारणि तुम्हि भो भविय आज, इहु पभणहु, निसुणहु, सरइं काज ।१६।

इय **नगरकोट** पमुक्ख ठाणिहिं जे य जिण मइं वंदिया ॥
ते **वीरलउंकड** देवि **जालामुखिय** मन्नइ वंदिया ।
अन्नेवि जे केवि सग्गि महियलि नागलोइहि संठिया ।
कर जोड़ि ते सवि अज्ज वंदउं फुरउ रिद्धि अचिंतिया ॥१७॥

इति श्री नगरकोट्ट-महातीर्थ-चैत्य परिपाटी ॥

॥ कृतिरियं श्री जयसागरोपाध्यायानाम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दी भावार्थ—

१. मेरे मन में जालंधर देश के प्रति क्षान्ति लगी है, तीर्थ वन्दन के हेतु मैं नगरकोट आया हूँ !

२. 'बाण गंगा, पाताल गंगा और व्यास नदी के तट पर विस्तृत वनराजि है घाट के आगे मार्ग है।

३. वहाँ पहले जिनालय में महिमा के भंडार प्रथम जिनेश्वर हैं। नेत्रों से अमृत रस पिलाने वाले शान्तिनाथ जिनेश्वर के दर्शन किए।

४. दूसरे जिनालय में जाने पर मन में अधिक रीझ उत्पन्न हुई जहाँ रूपचंद राजा का निर्मापित स्वर्णमय बिम्ब (विराजित) है।

५. जिनके दर्शनों से मन को संतोष होता है आनंद के उछ्वास आते हैं। अंधकार में उद्योत करने वाले जगद्गुरु वीर प्रभु जयवंत हैं

६. सरोवर में राजहंस को भांति तीसरे प्रासाद में आदीश्वर भगवान को जल, चंदन और चम्पक पुष्पों से (पूज कर) स्तुति करें।

७. अब चित्त में चमत्कृत होकर ऊँचे कांगड़ा गढ़ चढ़ा, यह तो मानो मैंने सिद्धशिला पर आरोहण कर लिया।

८. अंग में उल्लास नहीं समाता, माता-पिता और घर सब भूल गया। जब आदीश्वर भगवान दर्शनों से मेरे समस्त कार्य सिद्ध हो गए।

९. नेमिनाथ भगवान के जयवंत-शासन में राजा सुशर्म ज्ञात कर हिमालय से कांगड़ा कोट में जिन्हें लाया।

१०. चंद्रवंशी राजा-रानी जो प्रभु के चरणों में झुकते हैं, अंबिका देवी को कृपा से उन्हें मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है।

११. कंचनमय कलश युक्त ये चारों प्रासाद हैं। चारों वर्ण के लोगों से नत चारों प्रासाद विषाद को दूर करते हैं। गोपाचल के मस्तक पर मुकुट की भांति जगत के स्वामी शांतिनाथ भगवान हैं कामित फल प्राप्ति रसिक मैं उनके नाम में लीन हूँ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१२. नंदौन में चरम जिनेश्वर-महावीर स्वामी चिरकाल जयवंत हों। जिनके दर्शन से जगत चकोर की भाँति परम आनंद प्राप्त करता है। कोटिल ग्राम में अभिराम श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रशंसा करता हूँ। मेरा मन उनके गुण रूपी आम्रोद्यान में कोकिल की भाँति रमण करे।

१३. स्वर्ण कलश शोभित जिनालयों में इन सब देवों की स्तुति की। कोठी-नगर के देवालय में वीर जिनेश्वर की सेवा करता हूँ। पांचों तीर्थों को जब नमस्कार किया तो दुखों को जलांजली दी, सुख का प्रसार मिला और मोक्ष का द्वार प्राप्त किया।

१४. तीर्थ यात्रियों का मंगल हो, तीर्थ मार्ग का मंगल हो! मैंने जिससे सुखपूर्वक मुक्ति सुन्दरी की मांग भरी। स्त्रियाँ तो घर घर में बहुत हैं पर वह जननी और वह नगर धन्य है जिसकी कोख से उत्पन्न नर तीर्थ-यात्रा का पुण्य संचय करते हैं।

१५. इस प्रकार सपादलक्ष पर्वत के जिनेश्वरों का स्मरण किया तो हमारी आशा पूर्ण हुई। मैं जिन शासन का सेवक जयसागर ऐसा बोलता हूँ।

१६. इनको स्मरण करने से नरक गति को योग नष्ट होता है इनका स्मरण करने से स्वर्ग के भोग प्राप्त होते हैं। इसलिए अहो भव्यजन! तुम आज यह स्तवन पढ़ो, सुनो, कार्य सिद्ध होगा।

१७. इन नगरकोट प्रमुख स्थानों में जो मैंने जिन वन्दन किया वह वीर लउंकड़ और ज्वालामुखी देवी (की कृपा से) मानो, वंदन किया। अन्य भी जो कोई स्वर्ग, भू मंडल, नागलोग में संस्थित (जिन बिम्ब) हैं उन्हे सबको आज मैं हाथ जोड़कर वंदन करता हूँ, अचिन्त्य ऋद्धि स्फुरित हो!

यह श्री जयसागरोपाध्याय कृत नगरकोट चैत्य परिपाटी संपूर्ण हुई!

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री नगरकोट तीर्थ वीनती

(स० १४८८)

जालंधरि मंडल विमल, **नगरकोट** वर तित्थु।
जे तहि वंदय आदि जिण, ताह जन्म सुकयत्थु ॥१॥

नगरकोट उज्जल धवल, देउल च्यारि विसाल।
दंड कलस सोवन्न मइ, झलकइ पुण्य झमाल ॥२॥

वारइ नेमीसर तणए, थापिय **राय सुसरंभि**।
आदिनाइ अंबिक सहिय, **कंगडकोट** सिरम्मि ॥३॥

आदि जिणेसर परम गुरो, जे भावहि पूयंति।
जम्मि जमंतरि नारिनर, ते नव निहि विलसंति ॥४॥

रिसहनाह दंसणि सयल, पाव पलाइ दूरे।
अंधकारु किम थिति करए, तिहुअण उग्गय सूरे ॥५॥

दूजय देउलि वंदिय ए, **वद्धमाण** जिणचंदो।
नयणाणंदण चंद जिमि, उम्मूलय भव कंदो ॥६॥

सोवन पर गिरि परिवरिओ, सोवन वन्न सरीरो।
सोवन फूलहि पूजिय ए, **सोवनवसही** वीरो ॥७॥

तित्थ जि बिंबावलि नमइ, मंडपि मंडिय चंग।
सिद्धि वधू सउं ते करइ, नव नव उच्छव रंग ॥८॥

खरतर वसही कमलवणि, रायहंस सम्माण।
संति जिणेसर पूजिए, दीठह हुय कल्लाण ॥९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

दीसइ अति सोहामणओ, जिम जिम संति जिणेसु ।
तिम तिम परमाणंद मणि, नयणें अमिय पवेसो ॥१०॥

उच्च थंभ पूतल विउल, उज्जल शिखर पहाण ।
पेथड़ देउल पेखिय ए, जाणे सरग विमाण ॥११॥

गुरई आदीसर तणीय, मांहे मूरति सार ।
दीसइ जाणे प्रगट हुइ, पुण्य तणा भंडार ॥१२॥

चरचइ चंदन कुंकमहि, पेथड़ राय विहारे ।
पढम जिणेसर पय कमलो, ते धन्ना संसारे ॥१३॥

देउलि देउलि विविह परे, सयल, जिणेसर चंद ।
वंदीय पूइय रंग भरे, पामिय परमाणंद ॥१४॥

व्याह नदी तटि पणमियए, नंदणपुर सिंगारो ।
तित्थंकर चउवीसमओ, तिसला देवि मल्हारो ॥१५॥

गुण मणि रोहणगिरि सरिसो, वंछिय कामिय कंद ।
कोठीनयरहि पणमियए, चउवीसमउ जिणिंद ॥१६॥

इंद्रापुर वर उदयगिरे, उदयउ उज्जल भाणु ।
तित्थंकर तेवीसमउ, पणमउ सुक्ख निहाणु ॥१७॥

चउदह सय अठयासिय ए, संघिसयलि किय जात ।
पाप पडल सहु झड़ि पड़िया, निम्मल हुया गात ॥१८॥

इति नगरकोट विनती

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—

१. निर्मल जालंधर मंडल में नगरकोट श्रेष्ठ तीर्थ है। जो वहाँ आदिनाथ जिनेश्वर को वन्दन करता है, उसका जन्म सुकृतार्थ है।

२. नगरकोट में उज्ज्वल श्वेतवर्ण के चार विशाल देवकुल-जिनालय हैं जो स्वर्णमय दण्ड और कलश युक्त होने से पुण्य प्राग्भार जैसे चमक रहे हैं।

३. नेमिनाथ भगवान के समय कांगड़ा कोट के शिखर पर राजा सुशर्म ने आदिनाथ को अंबिका के सहित स्थापित किया।

४. परमगुरु आदिनाथ जिनेश्वर की जो भाव सहित पूजा करते हैं वह मनुष्य और स्त्रियाँ जन्म जन्मान्तर में नव निधि का विलास करते हैं।

५. भगवान ऋषभनाथ के दर्शन से सभी पाप दूर पलायन कर जाते हैं क्योंकि त्रिभुवन में सूर्योदय होने पर अन्धकार कैसे स्थिति कर सकता है।

६. दूसरे मन्दिर में श्री वर्द्धमान जिनेश्वर को वन्दना करें। वे चन्द्र की भांति नयनाभिराम हैं और संसार रूपी कन्द का उन्मूलन करने वाले हैं।

७. स्वर्ण वर्ण शरीर वाले प्रभु गिरिराज परस्वर्ण कान्ति परिवृत हैं। स्वर्ण वसति में वीर प्रभु को सोने के फूलों से पूजा करें।

८. तीर्थ पर सुन्दर मण्डप मण्डित बिम्बावली को जो नमस्कार करता है वह मुक्ति रमणी के साथ अभिनव विलासोत्सव करता है।

९. खरतर वसही रूपी कमल वन में राजहंस के सदृश श्री शांति जिनेश्वर की पूजा करो जिनके दर्शन मात्र से कल्याण होता है।

१०. अत्यन्त सुहावने श्री शांतिनाथ जिनेश्वर के ज्यों ज्यों दर्शन होते हैं त्यों त्यों मन में परम आनंद और नेत्रों में अमृत का प्रवेश होता है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

११. पेथड़ के जिनालय को देखो उज्वल पाषाणमय शिखर ऊँचे स्तंभों पर विपुल पूत्तलिकाएं हैं, लगता हैं, मानो स्वर्ग विमान ही न हो ?

१२. इसमें आदीश्वर भगवान की विशाल प्रतिमा है, मानो पुण्य का भंडार ही प्रगट हो गया दिखलाई देता है।

१३. संसार वे धन्य है जो पेथड़राय के विहार में प्रथम जिनेश्वर के चरण कमलों की चंदन-कुंकुम से पूजा करते हैं।

१४. मन्दिरों-मन्दिरों में समस्त जिनेश्वर की विविध प्रकार से हर्ष पूर्वक पूजन-वन्दन करके परमानंद प्राप्त किया।

१५. व्यास नदी के तटपर नंदौनपुर शृंगार चौवीसवें तीर्थंकर त्रिशलानन्दन (महावीर प्रभु) को वंदन करें।

१६. गुण रूपी मणि-रत्नों की खान, वांछित-कल्पतरु चौवीसवें जिनेन्द्र को कोठीनगर में प्रणाम करें।

१७. इन्द्रपुर में मानो श्रेष्ठ उदयगिरि पर उज्वल सूर्य उदय हुआ है। ऐसे सुख के निधान पार्श्वनाथ स्वामी को प्रणाम करो।

१८. सं १४८८ में समस्त संघ ने यात्रा की। पाप पटल सब झड़ गए-गिर गऐ और गात्र निर्मल हुआ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री नगरकोट चैत्य परिपाटी

(सं० १४९७)

देस **जलंधर** भत्ति भरे वंदिसु जिणवर चंद।
ठामि ठामि कउतिग कलिय विहसिय तरु बहु कंद ॥१॥

पगि पगि सीतल विमल जल सीयल वाय पयार।
गोपाचल सिरि संतिजिण सयल संति सुहकार ॥२॥

विसमा मारग घाट सवे विसम **गंग** पायाल।
सवालाख पव्वय सिहरे निम्मल नीर विसाल ॥३॥

बाणगंग बहु विमल जल वहइ जि बारह मास।
गढ मढ मन्दिर वावि सर दीसइ देव निवास ॥४॥

नीला अइगरुआ तरव विहसिय वेलि अपार।
दीसइ बहुपरि फूल फल विकसइ भार अढार ॥५॥

इय विसमइ गढ **किंगडइ** ए हूं चडिओ चमचंत।
राय सुसरमा हिमगिरि आणी मूरति कंत ॥६॥

एक राति प्रासाद वर अंबाई किय चंग।
तिह थिर थापिय आदि जिण दिनि दिन हुइ उछरंग ॥७॥

आलिगवसही वंदियइ ए मणिमय बिंब चउवीस।
धन्न मुहूरत धन्न दिण धन्न वरस धन्न मास ॥८॥

राय विहारह वीरजिण निम्मल कंचण काय।
निम्मिय देवल अइ विमल **रूपचंद** सिरि राय ॥९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सिरियमाल धिरिया भवणि पूजउ जिणवर पास।
आदिनाथ चउथइ भवणि पणमिय पूरिय आस ॥१०॥

धवलउ ऊंचउ पंचमउ ए खरतर तणउ प्रासाद।
सोलसमउ सिरि संति जिण दीठइ हुइ आणंद ॥११॥

आज मणोरह सवि फलिय आज जनम सुपवित्त।
निम्मल निम्मिय अज्ज मए दंसण नाण चरित्त ॥१२॥

कर जोड़ी प्रभु वीनवुं ए राखि राखि भव वास।
देहि बोहि चउवीस जिण सासय सुक्ख निवास ॥१३॥

संवत चउदसताणवइ (१४९७) ए जे वंदिय जिणराय।
चेईहर पडिमा थुणिय भगतिहि पणमिय पाय ॥१४॥

इय सासय जे देवकुल नंदीसर पायाल।
अमर विमाणे बिंब जिण ते वंदउ सविकाल ॥१५॥

॥ इति श्री नगरकोट चैत्य परिपाटी ॥

भावार्थ—

१. जालंधर देश स्थित जिनेश्वर को भक्ति पूर्वक वन्दन करूंगा। वहां तो स्थान स्थान कौतुक कलित है और बहुतसे कन्द और वृक्ष विकसित हैं।

२. पद पद पर निर्मल शीतल जल और ठण्ढो हवा चल रही है, गोपाचल पर श्री शांतिनाथ प्रभु समस्त शांति-सुख को करने वाले हैं।

३. विषम मार्ग है और पाताल गंगा के सभी घाट विषम हैं। सपादलक्ष पर्वत के विशाल शिखर हैं और निर्मल जल है।

४. बाणगंगा का पानी निर्मल है और बारहों मास वहता है। गढ, मढ, मन्दिर, बापी, सरोवर और देवताओं के निवास दिखलाई देते हैं।

५. अत्यन्त विशाल हरे-हरे वृक्ष और अपार बेलें हैं। बहुत प्रकार के फल-फूल दिखलाई देते हैं और अढार-भार-वनस्पति विकसित है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

६. इस विषम कांगड़ा के गढ़ पर मैं चढ़कर चमत्कृत हो गया। सुशमराजा वहाँ की कान्तिमय प्रतिमा को हिमालय से लाया था।

७. एक रात्रि में अम्बादेवो ने वहां श्रेष्ठ प्रासाद प्रस्तुत कर दिया, और आदीश्वर भगवान को प्रतिमा की स्थिर स्थापना की, वहाँ दिन दिन हर्ष उत्साह होता है।

८. आलिगवसति में मणिमय चौवीस प्रतिमाओं को वन्दन करें वह वर्ष, भी धन्य, मास भी धन्य, दिन भी धन्य और मुहूर्त्त भी धन्य है।

९. राय विहार जो राजा श्री रूपचंद के बनवाया हुआ महावीर स्वामी का जिनालय है उसमें कंचनमय वीर जिनेश्वर की निर्मल प्रतिमा है।

१०. धिरिया (धीरराज) श्रीमाल के भवन (जिनालय) में पार्श्वनाथ स्वामी की पूजा करो। चौथे जिनालय में श्री आदिनाथ भगवान को प्रणाम कर आशा पूर्ण हुई।

११. पांचवाँ खरतर-प्रासाद ऊँचा और श्वेतवण का है जहां सोलहवें तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ स्वामी के दर्शनों से आनंद होता है।

१२. आज सारे मनोरथ पूर्ण हुए, आज जन्म पवित्र हो गया, आज मैंने दर्शन, ज्ञान और चारित्र को निर्मल कर लिया।

१३. हाथ जोड़कर प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि भव समुद्र के निवास से उबारो-रक्षा करो ! हे चौबीस जिनेश्वर ! बोधि दो (जिससे मेरा) शाश्वत सुखों में निवास हो।

१४. संवत् १४९७ में जो जिनराज की वंदना की, चैत्यगृह-प्रतिमा की स्तवना की और चरण वन्दना की।

१५. वे शाश्वत जिनालय जो नन्दीश्वर, पाताल और देव विमानों में जो जिन बिंब हैं, उन्हें सब समय वन्दन करो।

श्री नगरकोट की चैत्य परिपाटी पूर्ण हुई।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री साधुवर्द्धन कृत

श्री नगरकोट आदिनाथ स्तवनम्

(सं० १५६५)

श्री नेमिनाथं भव ताप चन्दनं, प्रणम्य पार्श्वं **मरुकोट्ट** मण्डनम् ।
संघेन यात्रा विहिता हिता यथा, तथा तथा स्तौमि जिनेश्वरानहम् ॥१॥

उत्कण्ठया पञ्च विहार संस्थितान् नत्वा जिनान् भट्टिपुरे मनोरमान् ।
कृतार्थनं स्वं सुकृतैरनेकशः फलन्ति भाग्यौ खलु सन्मनोरथा ॥२॥

त्रिभाटिके निर्मल वारि वाहिनी-मुत्तीर्य नावा शतरिद्र निम्नगा ।
जालन्धरे चापि नगोदरे जिनान्, श्री बाजपाटे च नमामि भावतः ॥३॥

प्राप्ता गतो नन्दवनं सुनौभि-स्तीर्त्वा विभागा मिति तत्र वाहिनी ।
पद्माङ्ग मुत्तीर्य तथा परा पगा पातालगङ्गा मपि बाणगङ्गाम् ॥४॥

सपादलक्षै रिति संषया नगै वृत्ति सदाभिरैः विसानु भिस्मितैः
तरङ्गिणीनां मुख मेखु राजितैः पश्यन्तु राजतो हिमाचलम् ॥५॥

उच्चि रूचि दिशि दिशिमहा मानवः पव्वंतौघा,
स्थाने स्थाने सरल-सरला पादपाः पुष्पगन्धां ।
पादो तीर्या पथि पथि तथा निर्झरा वारि सारा,
शीतो वात स्सुखयत मनुस्सन्मनोऽर्हद्वचोवत् ॥६॥

एवं वहता मार्गं विनायको त्कालिका शिरस्थेन ।
श्री संघेन सुदृष्टं तीर्थं श्री नगरकोटाख्यम् ॥७॥

सहि सुख निवासः सर्व तीर्थावतंशो
जनयति च विनोदं लोचनै र्दृश्यमानः
सय सुखयति मनांसि श्रेयसां सन्निवेशो
भजतु नगरकोट्टं स्वं कृतार्थं कुरुष्वम् ॥ ८ ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुर मठ शुभ शाला लोक सौधाट्टमाला
गगन लिह विहारा श्री जिनानामुदाराः
नृप सदन विनोदा-राम-वापी-प्रपाश्च
त्रिदश कृत निवेशा भ्रान्ति यत्र प्रदेशाः ॥ ९ ॥

आरुह्य नगरकोट्टं श्री कंगुड़कोट्ट तीर्थं मति रम्यम्
स्वः सोपानमिव मोदं मुमुदेति मनसि तां सुधिया ॥१०॥

किं कर्प्पूर शिलाभि रेव विहितः किं चन्द्रबिम्बैरिव
किं स्फाटिक रत्न राजि भिरलं क्षौदो श्चमुक्ता भवै
मूर्त्तिः पुण्य दलै रिवोत्तम जनानन्द प्रदायीदृशा
दृष्टं स्पष्टतरं शुभोदय परं जैनोविहारो हृदि ॥११॥

तत्रा नन्दकरः शुभोदय पर श्छिन्नोग्र कर्म्मोत्कर
पादा नम्र सुर स्तथा सुरवरः सज्ज्ञान लक्ष्मीवरः
सर्वारिष्ट हरः समीहित करः श्रेयः श्रियां सुन्दरः
सत्यं लोचन गोचरः ससुभवन् श्रीमान्युगादीश्वरः ॥१२॥

पूजय त्वं युगादीश-मंगाग्र स्तुति पूजनैः।
निजं सफलितं जन्म भव्यै र्भावपरि भृशम् ॥१३॥

सुवर्ण्ण मूर्त्ति जिन वर्द्धमानं नमाम्यहं राजविहार मध्ये।
चतुः परान् विंशति रत्न मूर्त्ता नाह्लादने श्री जिनमन्दिरे तथा ॥१४॥

प्रणम्य रम्यानपरा न पीह जिनेन्द्र चन्द्रा नति भाव सारम्।
समुल्लसद्भक्ति परः शमीश मादीश्वरं विज्ञपयामि सारम् ॥१५॥

स्वामिन्मया नादि निगोद मध्या द्विनिसृतेन व्यवहार राशौ।
समागतेनापि जिनेन्द्र धर्म्मं नाकारि मोहादथ तारयेश ॥१६॥

विनिर्ज्जिता मोह मदादयस्त्वया भावार य स्तै र्विजितो स्म्यहं पुनः।
तेभ्यः स्वभक्तं चरणं प्रसेवकं सत्कृपानायक रक्ष रक्ष मां ॥१७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भ्रान्तोस्म्यहं योनिषु षष्ट-विंशि चतुर्षु लक्षेष्वधि कर्म्म योगात्।
त्वद्दर्शनं नाथ विना मनुष्य तिर्यंक सुर श्वभ्र गतिष्व भङ्गी ॥१८॥

अहो महामोह महत्व मेतत् त्वमीश दृष्टो पि हृदा न भावात्।
अद्याप्यहं नाथ ततो भव भ्रमो क्रिया फलन्तीह न भाव शून्याः ॥१९॥

कथं कथचिन्मनुजत्वमीश त्वं प्राप्तवान हृद वचनोरु विश्व।
जाने जगन्नाथ भवाब्धि पारं गमी भवत्स्वामिन्तव प्रसादात् ॥२०॥

मयाद्य लब्धः खलु चिन्तितो मणिः कल्पद्रुमः कामघटश्च धेनुः।
श्रीमद्युगादीश नतांह्रि पद्मे भृङ्गायते मे मनसा यदद्य ॥२१॥

त्वं माता त्वमसि शरणं त्वं पिता त्वं सुहृन्मे।
त्वं मे स्वामी सकल सुखद त्वं गुरु स्तत्व बोद्धा ॥
त्राता भ्राता त्वमसि शरणं त्वं प्रसोद प्रसीद।
याचे नान्यत् किमपि भगवन् वांछितं मे प्रदेहि ॥२२॥

श्री रम्योदयचन्द्र चारु गुरुभिः श्री संघयुक्ति र्यथा।
चक्रे विक्रम पंचषट् तिथि (१५६५) मिति संवच्छरे सुन्दरे ॥
यात्रा चैत्र सिताष्टमी शुभ दिने तीर्थेश्वराणां मुदा।
तत्तद्भाव मवाप्य शुद्ध वचनैः श्री नाभि जन्मा स्तुतः ॥२३॥

इत्येवं नृप नाभिनन्दन जिन ध्यानं प्रधानं मम।
कृत्वा साधु सुवर्द्धनोत्तम महातीर्थं कृतं वांछया ॥
यो ध्यायत्यनुवासरं च पठति स्तोत्रं त्वदीयं मुदा।
विश्वानंद जय श्रियं स लभते स्थान स्थित स्तत्फलम् ॥२४॥

॥ इति श्री नगरकोट्ट मण्डन श्री आदिनाथ स्तवनम् ॥

भावार्थ—

१. भव रूपी ताप को मिटाने में चन्दन सदृश श्री नेमिनाथ भगवान और मरुकोट (मरोट) मण्डन श्री पार्श्वनाथ स्वामी को नमस्कार करके हित (सुख-मोक्ष) के हेतु जैसे संघ ने यात्रा की उसी प्रकार उन जिनेश्वरों की मैं स्तवना करता हूं।

3
Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

२. भटनेर में पाँच मनोरम विहारों में संस्थित जिनेश्वरों को उत्कण्ठापूर्वक नमस्कार करके अपने को अनेक प्रकार के सुकृतों से कृतार्थ करते हैं, उत्तम मनोरथ तो निश्चय ही भाग्य से फलते हैं।

३. त्रिभाटक में निर्मल जल वाली सतलज नदी को नौकाओं से पार करके जालन्धर और नगोदर व श्री बाजपाट में जिनेश्वरों को भाव पूर्वक नमस्कार करता हूँ।

४. नौकाओं से वहाँ विभागा (विपासा-व्यास) नदी को तैर कर नन्दौन में जा पहुँचे। पद्मा (?) को पार करके पातालगंगा और बाणगंगाको भी पार किया।

५. पर्वतों की आनंदोल्लासमयी सपादलक्ष संख्यक चोटियाँ परिलक्षित हैं, उन्हें एवं नदियों के उद्गम स्थान गिरिराज हिमाचल को देखो।

६. सब दिशाओं में ऊँचे ऊँचे महामानव स्वरूप मनोहर पर्वत है। स्थान-स्थान पर सीधे-सरल सुगन्धित पुष्प युक्त वृक्ष हैं। पैरों से चलकर मार्ग-मार्ग पर झरनों से प्रवाहित पानी और शीतल वायु मनुष्यों के मन को अर्हत् वाणी की भाँति सुखी करती है।

७. इस प्रकार मार्ग वहन करते विनायक और कालिका स्थान से ऊपर जाने पर श्री संघ ने श्री नगरकोट महा तीर्थ को देखा।

८. समस्त तीर्थों में मुकुट भूत सुख का निवास, नेत्रों द्वारा देखने पर विनोद प्रदान करता है, मन को सुख देता है। कल्याण के सन्निवेश **नगरकोट** महातीर्थ को भजकर अपने को कृतार्थ करो।

९. देवताओं के मठ, धर्मशाला, लोगों के अट्टालिका-महल श्रेणी, गगनचुम्बी उदार जिनालय, राजभवन, विनोदार्थ उद्यान, वापी और प्रपाओं वाले उस प्रदेश को देखकर भ्रान्ति होती है कि ये क्या देवताओं द्वारा निर्मित हैं?

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१०. **नगरकोट** आरोहण कर श्री **कांगड़ा** कोट तीर्थ अत्यन्त रमणीक और स्वर्ग के सोपान की भाँति सुधी जनों के मन को प्रमोद कारक लगा।

११. क्या यह कपूर-शिला द्वारा निर्मित है? या चन्द्र बिम्ब की भाँति है? क्या यह स्फटिक रत्न श्रेणि या मुक्ता-पिष्टि द्वारा निर्मित है? भगवान की प्रतिमा पुण्य दल की भाँति उत्तम लोगों को दर्शन करते ही आनंददायक जिनालयों को शुभ कर्मोदय से स्पष्ट रूप से देखा।

१२. वहाँ आनन्दकारी, उग्र कर्मों को नाश करने वाले शुभोदय से देव-देवेन्द्रों से नत, सद्ज्ञान लक्ष्मी से श्रेष्ठ, सर्व पापों को हरण करने वाले, कल्याण-लक्ष्मी जिसके हस्तगत हो ऐसे सुन्दर नयनाभिराम श्रीमान् युगादीश्वर **ऋषभदेव** सत्य ही शुभकारी हैं।

१३. विपुल भव्य भावों से युगदीश जिन-ऋषभदेव की तुम अंगपूजा-अग्रपूजा और स्तुति (भावपूजा) द्वारा अपना जन्म सफल करो।

१४. **राज विहार** में स्वर्णमय महावीर स्वामी जिनेश्वर की प्रतिमा को और **आह्लादन** जिनालय में **चौबीस रत्नमय मूर्त्तियों** को मैं नमस्कार करता हूँ।

१५. अन्य जिनेश्वरों की रम्य प्रतिमाओं को भाव सहित नमस्कार करके भक्ति के उल्लास पूर्वक शमीश-शान्त रस के स्वामी श्री आदीश्वर भगवान को मैं सार रूप वीनती करता हूँ।

१६. हे स्वामिन्! मैंने अनादि निगोद राशि में से निकल कर और व्यवहार राशि में आकर भी मोह के वशीभूत होकर जिनेश्वर का धर्म नहीं किया, अब हे ईश्वर! मुझे तारो!

१७. आपने मोह मदादि को जीता है और मैं भाव शत्रुओं से जीता गया हू अतः अपने चरण सेवक भक्त की (यह प्रार्थना है) कृपानाथ, मेरी रक्षा करो! रक्षा करो!

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१८. कर्म योग से मैं चौरासी लक्ष जीव-योनि में भ्रमण कर रहा हूँ। आपके दर्शन बिना हे नाथ ! मनुष्य, तिर्यंच देव और नरक गति में रहा।

१९. अहो ! महामोह का ही ऐसा महत्त्व प्रभाव है कि आप परमेश्वर को देख कर भी हार्दिक भाव के बिना हे नाथ ! आज तक मैं भव भ्रमण करता हूँ क्योंकि भावशून्य क्रिया कभी फलवती नहीं होती।

२०. कभी कदाचित् मनुष्य भव पाकर आपको पाया तो भी वचनों पर हार्दिक विश्वास नहीं किया (?) किन्तु हे जगत् के नाथ ! अब जानता हूँ कि स्वामिन् आपके प्रसाद से भव समुद्र पार करूँगा।

२१. मैंने आज निश्चय ही चिन्तामणि रत्न, कल्पवृक्ष, कामघट व काम धेनु प्राप्त कर ली, जबकि श्रीमद् युगादीश्वर के चरण कमलों में नत भ्रमर की भाँति मेरा मन संलग्न हो गया।

२२. आप ही माता-पिता-मित्र और शरणभूत हैं, आप ही मेरे सकल सुख दाता स्वामी हैं आप ही तत्वज्ञ गुरु हैं, आपही रक्षक भ्राता और आपका ही मुझे शरण है। हे स्वामी ! आप प्रसन्न हों ! प्रसन्न हों ! मैं और कुछ भी याचना नहीं करता, भगवन् ! मेरा वांछित मुझे दें।

२३. श्री उदयचन्द्रसूरि गुरु ने श्री संघ के साथ जैसे विक्रम संवत् १५६५ की चैत्र शुक्ल ८ के शुभ दिन में तीर्थाधिराज की यात्रा की। उन उन भावों को प्राप्त कर शुद्ध वचनों से श्री नाभिराजा के पुत्र ऋषभदेव स्वामी की स्तुति की।

२४. ये नाभिराजा के नन्दन जिनेश्वर ही मेरे प्रधान ध्यान (केन्द्र) हैं। साधुवर्द्धन ने उत्तम महातीर्थ का ध्यान करके वांछा की। जो रात दिन आपका ध्यान करते हैं, आपके स्तोत्र को पढ़ते हैं वे अपने स्थान में बैठे ही विश्वानंदकारी जय और कल्याणकारी फल प्राप्त करते हैं।

नगरकोट मण्डन आदिनाथ का स्तवन समाप्त हुआ।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कवि कनकसोम कृत

श्री नगरकोट आदीश्वर स्तोत्र

(सं० १६३४)

णमवि गुरुचरण कमल निज हाथ जोड़ी ;
करिसु थवन श्री ऋषभ ना मान छोड़ी ।
जिम सेत्रुंजि तीरथ लाभ लेषइ,
तिम नगरकोट्टइ कहया अति विशेषइ ॥१॥

जिम राउ रूपचंद आगइ विचार,
गुरे लाभ अति कहयउ सेतुज्जि सार ।
महिम सुणीय सिधखेत्रनी रूपचंदइ,
लीयउं अभिग्रह अन्न नउ तित्थ वंदइ ॥२॥

कहां देस जालंधर अतिहि दूरि,
कहां सेतुज सिखर मनि भाव पूरि ।
गुरे अंबिका ध्यानि करि निकट आणो,
जिन शासन उन्नति लाभ जाणी ॥३॥

कहइ अंबिका कवण काजइ हकारी,
गुरे बात जे कहीय तेहिज सकारी ।
निशि देहरउ करीय प्रतिमा अणाई,
तहां धवलगिरि हती ते अति वणाई ॥४॥

दीयउ दरस सुपिणइ देवी राउ ऊठउ,
तुम्हि रिषभ आदीसर देव तूठउ ।
करीय पूज करि पारणउ देवि भाषइ,
जय सबद कुण गुरु विणा माम राखइ ॥५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तिहां खाल विणु पाणीय रहइ नांही,
इसी महिम सुणि यात्रा अन्नेक जाही।
हूअउ अम्ह मनि भाउ यात्रा कराणी,
तिम भवियण सुणहु मीठी कहाणी ॥६॥

॥ ढाल ॥

देश जालंधर देव थानक जगि जाणियइ रे साल ताल देवदारु
परघल रे परघल वावि नदी जल पूरीयउ जी।
सतरंज महानदी नावा सुखि ऊतरी जी सवालाख गिरिराजि
मटीया रे मटीया परबत वेलि अंकूरीयउ जी ॥७॥

ठामि ठामि संघ देरा दे करि ऊतरइ जी कोइ न भंजइ डाल
तरवर रे तरवर फूल पगर महकी रह्या रे।
राजपुरा जिहां पवन छतीस अंतरि वसइ जी नीझरणे हि निवाण
सुखमइ रे सुखमइ संघ सहू तिह कणि वहइ रे ॥८॥

जिहि पातालगंगा खलहलखलहल वहइ रे लोक करइ तिहांन्हाण,
वाणी रे वाणी कोइल करइ टहूकड़ा जी।
इक इक थकी ऊकाली चडतां दोहिली रे जिहां विनायक थान
तिह कणि रे तिह कणि नगरकोट देख्या ढूकड़ा रे ॥९॥

गढ़ कांगड़ा नगर पेख्यां हरख्या सहू रे वीर लंकडीया तीरि।
आव्या रे आव्या बाणगंगा पगिवटि तरी रे।
पहिरि धोवति उज्जल सब संघ मिली करी रे फल नालेर चढाइ
भेटया रे भेटया आदीसर चक्केसरी रे ॥१०॥

बइठा पदमासन भगवंत सुहामणा रे, नयणे देख्या स्वामि
वलि रे वलि दीजइ दान उवारणइ रे।
संतोसर महावीर भुवणि पूजा करी रे, भावन भावइ संघ
जइचंद रे जइचंद राजमहल कइ बारणइ रे ॥११॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तूं जगनायक तूं जगबंधव तूं धणी जी, करि सेवक नी सार
सब सुख रे सब सुख दोजइ सामी सासता रे।
पूजा गीत भगति करि देव जुहारीया रे, फल्या मनोरथ काज
सब मनि रे सब मनि पूगी मनमहि आसता रे ॥१२॥

इणि परइ आदि जिणंद भेटी कुसल खेमइ निज घरइ।
सब संघ आवइ ऋद्धि पावइ सुक्ख थावइ बहु परइ ॥
इम महिमा जाणी भाव आणी करइ यात्रा आदरइ
सिधक्षेत्र नउ ते लाभ पामइ कहइ कनक सुविस्तरइ ॥१३॥

इति श्रीनगरकोट श्रीआदीश्वर स्तोत्रम् ॥
सं० १६३४ वर्षे कृतं प० कनकसोम गणिना।

भावार्थ—

१. गुरुदेव के चरण कमलों में अपने हाथ जोड़ के नमस्कार कर मान का त्याग कर श्री ऋषभदेव भगवान की स्तवना करूंगा। जैसे शत्रुंजय तीर्थ (यात्रा) का लाभ बतलाया है वैसे ही नगरकोट का अति विशेष रूप से कहा है।

२. जैसे राजा रूपचन्द्र के आगे गुरु महाराज ने शत्रुंजय यात्रा का अत्यंत लाभ बतलाया और सिद्धक्षेत्र की महिमा सुनकर रूपचंद ने तीर्थ वन्दन करके ही अन्न लेने का अभिग्रह ले लिया।

३. कहाँ अत्यन्त दूर देश जालंधर और कहां शत्रुंजय शिखर ? किन्तु मन में भावोल्लास था। जिन शासनोन्नति का लाभ जानकर गुरु महाराज ने ध्यान बल से अम्बिका को निकट बुलाया।

४. अम्बिका ने कहा-मुझे किस कार्य के लिए बुलाया ? गुरु महाराज ने जो कहा उसे स्वीकार किया। रात्रि में देवगृह निर्माण कर प्रतिमा मंगाई। वहाँ धवलगिरि में जो थी वही बना (स्थापित कर) दी।

५. स्वप्न में देवी ने दर्शन देकर कहा—राजन् उठो ! तुम्हारे पर आदीश्वर

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदेव तुष्ट हुए हैं। पूजा करके पारणा करो—देवीने कहा। जय जयकार हुआ। गुरु के बिना कौन इज्जत रखता है।

६. वहाँ नाली नहीं है पर प्रभु का (स्नात्र) जल नहीं रहता, यह महिमा सुनकर अनेक लोग यात्रा करने जाते हैं। हमारे मन में भी भावना हुई और यात्रा की गई उसकी मधुर वार्त्ता भव्यजन सुनें !

७ जालंधर देश देवभूमि को जगत जानता है जहां साल, ताल और देवदार के वृक्ष हैं, प्रचुर वापी और जलपूर्ण नदियां हैं। नौका द्वारा सुख पूर्वक सतलज महानदी को पार करके सपादलक्ष पर्वत जो मटीया है और वेलि वृक्षादि अंकुरित है।

८. स्थान स्थान पर संघ डेरा करके उतरता है पर कोई डाल नहीं तोड़ता। तरुवर पुष्प पगर से महक रहे हैं। राजपुरा में छत्तीस पौन निवास करती है। झरणों का पानी निवाण में बहता है और समस्त संघ सुख पूर्वक वहाँ चलता है।

९. जहां पातालगंगा खलखलाहट करती हुई वहती है—लोग वहां स्नान करते हैं। कोकिल की वाणी—टहूकड़ा करती हुई कूजती है। एक से एक चढ़ाव दुष्कर है, जहां विनायक का स्थान है वहां से नगरकोट निकट दिखाई देने लगा।

१०. कांगड़ा गढ़ नगर देखकर सभी हर्षित हुए और लंकड़ीया वीर के निकट बाणगंगा को पार कर पैदल मार्ग से आये। उज्ज्वल धोती पहन कर समस्त संघ ने मिलकर आदीश्वर व चक्रेश्वरी को भेटा व फल-नारियल चढ़ाए।

११. पद्मासन मुद्रा में विराजमान सुहावने भगवान को नेत्रों से दर्शन किया और स्वामी पर वारंवार निछरावल कर के दान दिया। शांतिनाथ और महावीर स्वामी के जिनालय में पूजा करके संघ ने शुभ भावना भाई। राजमहल के द्वार पर जयचंद राजा प्रतीक्षा करता मिला।

१२. तुम जग नायक हो, तुम ही जगत् के बन्धु और नाथ हो ! सेवक की सुधि लो ! हे स्वामी, सभी (अनन्त) शाश्वत सुख दो ! इस प्रकार

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पूजा, गीत और भक्ति करके देववंदन किया मनचिन्तित-मनोरथ सफल हुए, सब के मन की आशा पूर्ण हुई, मन में श्रद्धा (बढ़ो)

१३. इस प्रकार आदिनाथ जिनेन्द्र को भेट कर कुशल क्षेम पूर्वक सारा संघ अपने घर लौटा। इससे ऋद्धि प्राप्त होती है और अनेक प्रकार का सुख होता है। यह महिमा जानकर जो भाव पूर्वक यात्रा करता है वह सिद्धक्षेत्र को यात्रा का लाभ पाता है। कनकसोम कवि का सविस्तर कथन है।

॥ नगरकोट का आदीश्वर स्तवन पूर्ण हुआ, सं० १६३४ वर्ष में पं० कनक-सोम गणि ने यह बनाया।

कवि परिचय

कवि कनकसोम—ये खरतरगच्छीय वा० अमरमाणिक्य गणि के शिष्य थे। ये नाहटा गोत्रीय और अच्छे विद्वान कवि थे। सं० १६२५ में वा० साधुकीर्तिगणि के साथ अकबर के दरबार में आगरा गए थे और बाद में दूसरी वार सं० १६४८ में भी श्री जिनचंद्रसूरिजी के साथ अकबर के दरबार में लाहौर गए थे। इनकी निम्नोक्त रचनाएं उपलब्ध हैं :—

१. जइत पदवेलि सं० १६२५ आगरा २. जिनपालित जिनरक्षित रास सं० १६३२ नागौर ३. आषाढभूति धमाल स० १६३२ खंभात ४. हरिकेशी सन्धि सं० १६४० वेराट ५. आर्द्रकुमार धमाल सं० १६४४ अमरसर ६. मंगलकलश फाग सं० १६४९ मुलतान ७. थावच्चा सुकोशल चरित्र सं० १६५५ नागौर ८. कालिकाचार्य कथा सं० १६३२ जेसलमेर ९. हरिबल सन्धि १०. श्री जिनवल्लभीय ५ स्तवनाचूरि सं० १६१५ ११. गुणठाणा विवरण चौ० गा० ९० सं० १६३१ आगरा १२. नववाड़ गीत गा० २९ १३. आज्ञा सज्झाय गा० १७ १४. शांतिनाथ स्तवन गा० २९ १५. नेमिनाथ फाग गा० ३० रणथंभोर १६. शाश्वत जिनस्त० गा० २३ १७. जिनकुशलसूरि स्त० सं० १६६० मालपुरा १८. नगरकोट स्तवन सं० १६३४ १९. श्री जिनचंद्रसूरि गीत गा० ११ २०. श्री जिनचंद्रसूरि गीत गा० ५ २१. कल्पसूत्र बालावबोध पत्र २२३।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीजयसागरोपाध्याय कृत तीर्थराजी स्तवन के चार श्लोक

विज्ञप्ति त्रिवेणी में प्रवत्तक श्री कान्तिविजयजी के संग्रहस्थ प्राचीन पुस्तक में जयसागरोपाध्याय कृत तीर्थराजो स्तवन की चार गाथाएँ, प्रकाशित हैं जिसमें फरीदपुर के सं० सोमं के संघ के साथ जाकर उन्होंने यात्रा की उसका वर्णन है

अपिच नगरकोट्टे देश जालन्धरस्थे
प्रथम जिनपराजः स्वर्ण मूर्त्ति स्तु वीरः।
खरतर वसतौ तु श्रेयसां धाम शान्ति-
स्त्रय मिद मभिनम्याह्लाद भावं भजामि ॥१८॥ (१)

आनन्दाश्रु जलाविले ममदृशौ जाते चिरोत्कण्ठया,
दिष्टया कङ्कटक स्थितः प्रथमतो दृष्टो यदादिप्रभुः।
तत्किं साऽपि सरस्वती स च गुरु र्नूनं सुप्रसन्नो यतो,
जिह्वा तद्गुण वर्णनादभिनवान्नाद्यापि विश्राम्यति ॥१९॥ (२)

श्री गोपाचल तीर्थे शान्ति, कोटिल्लके परंपार्श्वम्।
नन्दनवन-कोठीपुर पूज्यं प्रणमामि वीरमहम् ॥२०॥ (३)

एते तेषु सपादलक्षगिरिषु प्रत्यक्ष लक्ष्याः खलु
क्षेमा एवं मया चतुर्विध महासङ्घेन चाभ्यार्चिताः
प्रायः काञ्चन कुम्भ शोभित गुरु प्रासाद मध्यस्थिताः
सान्द्रा नन्द पदं दिशन्तु मम ते विश्वत्रया स्वामिनः ॥२१॥ (४)

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—

१. जालन्धर देश के नगरकोट में प्रथम जिनेश्वर आदिनाथ, स्वणमय प्रतिमावाले महावीर स्वामी और खरतर वसति में कल्याण के धाम श्री शान्तिनाथ, इन तीनों को वन्दन कर प्रसन्नता अनुभव करता हूं।

२. जब पहले पहल कांगड़ा स्थित आदिनाथ स्वामी को देखा तो चिरोत्कण्ठा के कारण मेरे नेत्रों से आनन्दाश्रु जल भर आया। तो क्या वह सरस्वती और वे गुरुदेव निश्चय ही मेरे पर सुप्रसन्न हैं जिस से मेरी जिह्वा उनके गुणों को वर्णन करने में आज भी विश्राम नहीं पाती अर्थात् नहीं थकती।

३. श्री गोपाचल तीर्थ में शान्तिनाथ, कोटिल में पार्श्वनाथ स्वामी एवं नन्दौन व कोठीपुर में पूज्य श्री महावीर स्वामी को मैं प्रणाम करता हूं।

४. ये सपादलक्ष पर्वत में निश्चय ही प्रत्यक्ष कल्याण के लक्ष्य से मैंने और चतुर्विध महासंघ ने प्रभु की अभ्यर्चना की है—पूजा की है। कञ्चनमय कलशों वाले प्रासाद के मध्य विराजित तीन लोक के नाथ मुझे शाश्वत घन आनन्द का पद (मोक्ष) प्रदान करें।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अभयधर्म गणि रचित

नगरकोट वीनती

पणमीय ए सुहगुरु पाय, नगरकोटि जिणु भेटिवा ए।
चालीउ ए संघ सुजाण, पाप तणउ भय मेटिवा ए।।
पालखी एं नइ चकडोल, साहण वाहण सेजवाल।
बलदह ए ऊट न पासी, किर चामर छत्रमाल।।१।।

सुभ दिन ए सीयलइ वारि, कंकोतीय हरखिहि करीए।
भेजीय ए तेड़ए लोक, संघपति पदवी सिरिधरी ए।।
चिहुंदिसि ए आवइ संघु, परिवारिहि संपूरिया ए।
गहगह्या ए सवि नर नारि, नाचहि नवरसि पूरिया ए।।२।।

महमद ए पुरवर ठामि, देखीय जिणहर मणहरू ए।
वंदीउ ए अजित जिणंद संति जिणेसर सुहकरू ए।।
तउ वली ए गढिहि हिंसारि, खरतर वसहीय अति भली ए।
तिहां छइ ए अजित जिणनाहु, नयणिहि जोइसु वलि वलि ए।।३।।

नयरह ए वर समीयाणि, आदीसरु मन रंगि करे।
सीहनद ए पास जिणंद, पूजिसु परमाणंद भरे।।
कोठीय ए नयर सुविसाल, पास वीर सोहामणउ ए
ऊगीयउ ए अभिनव चंद, दीसंता रलियामणउ ए।।४।।

।। भास ।।

तउ हिव परमाणंद भरे, चालइ संघ विसाल त।
प्रथम उकाली जब चडचा ए, दीसइ हिमगिरि माल त।।
जाणे आदि भुवण तणी ए, धज दीसइ सुविसाल त।
टग मग टग मग जोईय ए, चिहुंदिसि परबत माल त।।५।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

आंब जंभीरी आंबलोय, केला दाडिम दाख त।
वडा बेर बन फल घणा ए, खीप जिहा पदमार य त ।।
मारगि वनसपति घणी ए, नंदणवणह मझारि त।
मल्लिनाथ जिणवर तणो ए, पूजिय प्रतिमा फार त ।।६।।

गढ गोपाचलि पणमिय ए, सामी नेमि जिणंद त।
कोटि नगरि श्री पास जिण, नंदपुरि संति जिणंद त ।।
व्याह नदी सुखि ऊतरिय, दूजी गंगा बाण त।
तीजी गंग पाताल तिहां, ऊतरि गरूयइ ताण त ।।७।।

पाज विनायक जब चडचा ए, राणीय सरवर पालि त।
कूया-वावि वन जोवता ए, दीसइ नयर विसाल त ।।
दीसइ जिन मंदिर तणो ए, कलस धजा अति चंग त।
पणमिय परमाणंद भरे, पहुता नयर सुर चंग त ।।८।।

झरहर झरहर झरहर ए निर्झरण अपार।
अंब जँब नइ खीरणी ए वन भार अढार ।।
बाणगंग जसु वहइ तीरि निरमल जल पूरी।
सूवट सारस राजहंस मानिहि संपूरी ।।९।।

गढ - मढ - मंदिर नगरकोटि प्रासाद उतंग।
वन-वाडी अभिराम ठाम जिहां जिणहर चंग ।।
कूव सरोवर हेम कलस तोरण घण दीपइ।
धण कण कंचण पूरीयउ अमरापुरि जीपइ ।।१०।।

सोवनवसइ वीर नाह सोवन सरीरो।
रूपचंद राइ थापियउ कंचणगिरि धीरो ।।
खरतरवसही मनह रंगि आदीसर दीठउ।
हीयडु हरखिहि उल्हस ए जाणु अमीय पइट्ठउ ।।११।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ भास ॥

कंगुडकोटइ पहुचइ बाली, फूल चंगेरी ले करि माली ; धावइ मन उछरंगे ।
पग पग पउलइ कउतिग जोवइ, सुभह भावि मल कसमल धोवइ ;
भेटइ तीरथ राउ ॥१२॥
वालउ वेउल चंपक फूल, कुंजउ केवड़ अति घण मूल ; सिरि गुलाल मचकुंद ।
चंदन केसर नइ कसतूरी, पिहरिय धोवति हरखिहि पूरी ;
पूजइ आदि जिणंदो ॥१३॥
महापूज धज रंग करेई, पुण्य तणउ भंडार भरेई, वेचइ वित्त अपार ।
अल्हिग वसही जिण चउवीस, फटिक मइ तसु नामउं सीस,
सीमंधर जिण राय ॥१४॥

॥ ढाल-वीवाहला नी ॥

रंगइ मंडपि मोकल ए, तिहां कउतिग जोइवा जणु मिलए ।
सवि मिलि तेवड़ तेवडी ए, सिरि गूंथीय सोवन केवड़ी ए ॥१५॥
कानिहि झालि झबूकती ए, करि सोवन चूड़ी खलकती ए ।
सिर वरि सोहइ राखड़ी ए, वर काजलि आंजीय आंखडी ए ॥१६॥
उरवरि नवसर हारु ए, पगि नेऊर रुण झुण कारु ए ।
पिहरणि नेत पटउलडी ए, सिरि उढणि सुरंग सुचूनडी ए ॥१७॥
रुपह रंभ हरावती ए, श्रीयआदि जिणेसर जोवती ए ।
नाचइ अवसरु ते लही ए, रंगइ गुण गावहि गहगही ए ॥१८॥
इणिपरि मन हरखिति करीए, प्रभु भेटीयत सुगुण मनि धरी ए ।
श्रीय संघ निज घरि आईयउ, मोतीय रयणि वधाउवीउए ॥१९॥

॥ कलश ॥

इय आदि जिणवरु भुवण दिणयरु नगरकोटि नमंसिउ ।
गणि अभयधरमिहि विविह भत्तिहि करिय जातय संसीउ ॥
जो धम्मनायक सुख्य दायक देवि अंबिक परवरिउ ।
घण घन्न कारण कुगइ वारण स्वामि महिमा अति भरिउ ॥२०॥

॥ इति नगरकोट वीनती ॥

[अनूप संस्कृत लायब्रेरी के गुटके से]

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—

१. सद्गुरु के चरणों में प्रणाम कर पाप का भय मिटाने के लिए सुज्ञानी संघ नगरकोट स्थित जिनेश्वर को भेटने-यात्रा हेतु चला। पालखी, चकडोल, सेजवाल गाडियों के वाहनों का साधन है बैलों और ऊँट

२. शुभ दिन और सौम्य-शीतल वार में हर्ष पूर्वक कुंकुमपत्रिकाएं लोगों को बुलाने के लिए प्रेषित की गई। संघपति पदवी को धारण कर चारों दिशाओं का संघ सपरिवार आने लगा उल्लास पूर्वक सभी नरनारी नवरस पूण नृत्य करने लगे।

३. श्रेष्ठ स्थान महमदपुर में मनोहर जिनालय देखा और अजितनाथ व सुखकारी शान्तिनाथ जिनेश्वर को वंदन किया। फिर हिसार कोट में अति सुन्दर खरतरवसही है जहां अजितनाथ जिनेश्वर हैं जिनके मैं बारंबार दर्शन करूंगा।

४. सम्मियाणि (समाणा) नगर में चित्त को प्रसन्न करने वाले आदीश्वर भगवान, सींहनद में पार्श्वनाथ स्वामी की परम आनंद पूर्वक पूजा करूंगा। कोठीनगर में सुविशाल पार्श्वनाथ और महावीर सुशोभित हैं वे देखने में ऐसे मनोहर लगते हैं मानो अभिनव चंद्रमा ही उदित हुए हों।

५. अब विशाल संघ बड़े भारी आनंद से परिपूर्ण हो आगे चला तो प्रथम उकाली (चढाव-चोटी) चढते हो हिमालय की शिखरमालाएं दीखने लगी मानो वे आदिनाथ स्वामी के जिनालय की सुविशाल ध्वजाएं हों। चारों ओर की पर्वतमाला को टगमग टगमग देखी।

६. आम, जंभीरी, इमली, केला, दाडिम, द्राक्ष एवं वड़बोर, खींप आदि वनफल भी बहुत थे नंदनवन (नंदौन) में मार्ग में बहुत प्रकार की वनस्पति है, वहां मल्लिनाथ जिनेश्वर की विशाल प्रतिमा की पूजा की।

७. गोपाचल गढ पर नेमिनाथ स्वामी को वन्दन किया, कोटि नगर में पार्श्वनाथ स्वामी, नंदपुर में शांतिनाथ जिनेश्वर हैं। पहली व्यास

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नदी दूसरी बाणगंगा और तीसरी पातालगंगा को सुख पूर्वक पार करके बड़े भारी तंबू तान के उतरे (या तोव्र प्रवाह को पार किया)।

८. जब विनायक पाज चढ़े तो रानी सरोवर की पाल, कूप, वापी और वन को देखते हुए विशाल नगर नजर आया। जिनालय की ध्वजा और कलश अत्यन्त सुन्दर दिखलाई देते थे। नगर में पहुँच कर वहां परम आनंद पूर्वक जिन-वन्दन किया।

९. अगणित पहाड़ी झरने झरते हुए प्रवाहित थे। आम्र, जामुन, और खिरणी आदि अढार भार वनस्पति थी। निर्मल जल से परिपूर्ण बाणगंगा नदी वह रही थी जिसके तटवर्त्ती वन में शुक, सारस और राजहंसादि सम्मानित पक्षी परिपूर्ण हैं।

१०. नगरकोट में गढ-मठ-मंदिर और ऊँचे प्रासाद हैं। जहाँ सुन्दर जिनालय हैं मनोहर वन-वाटिका है। कूप-सरोवर और बहुत से स्वर्णमय कलश और तोरण सुशोभित हैं। धन-धान्य और स्वर्ण से भरा हुआ नगर इन्द्र की राजधानी अमरावती को भी जीतने वाला है।

११. सोवन वसति में स्वर्णमय काया वाले महावीर स्वामी कंचनगिरि—मेरु पर्वत को भाँति धोर हैं, उसे राजा रूपचंद ने स्थापित किए थे। खरतरवसही में आदीश्वर भगवान के प्रसन्नता पूर्वक दर्शन किए। हृदय हर्ष से उल्लासित हो गया, मानो अमृत ही प्रविष्ट हो गया हो।

१२. कांगड़ा कोट पर बालाएँ पहुचती हैं तो माली लोग मनोल्लास पूर्वक पुष्प चंगेरी लेकर दौड़ते हैं। वे पद पद पर कौतुक देखती हुई, शुभ भावों से पापों का प्रक्षालन करती हुई तीर्थराज भेटती हैं।

१३. वालक, बकुल, चंपक, कुंज, केवड़ा आदि बहुमूल्य पुष्प श्री गुलाब और मचकुंद हैं। इन पुष्पों के साथ हर्ष पूर्वक धोती पहिनकर चंदन केसर और कस्तूरी से आदिनाथ भगवान की पूजा करते हैं।

१४. रंगीन महाध्वज की पूजा कर चढ़ाते हैं, पुण्य का भण्डार भरते हैं, अपार धन बाँटते हैं। आल्हिगवसही में स्फटिक मय चौवीस तीर्थंकर और सीमंधर स्वामी की प्रतिमाएं हैं उन्हें नमस्कार करता हूं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१५-१६-१७-१८. रंग मंडप खुला है जहाँ कौतुक-नाटक देखने के लिए लोग एकत्र होते हैं। सब ने मिल कर सामग्रो (साज-सामान) तैयार की हैं। (महिलाएं) सिर गूंथ कर स्वर्णमय केवड़ी (खूंप-मस्तक पर धारण करने का आभरण), कानों में झलकते हुए (कर्णफूल), हाथों में खलकती हुई सोने की चूड़ियाँ हैं, सिर पर रखड़ी सुशोभित हैं, श्रेष्ठ काजल से नेत्र आंजे हुए हैं, हृदय पर नवसर हार है, पैरों में नुपुर रुणझुगकार करते हैं। नेत्र-पटोलड़ी पहन कर मस्तक पर सुरंगी चूनड़ी ओढी हुई है। इस प्रकार रूप-लावण्य में रंभा को हराती हुई महिलाएँ श्री आदीश्वर भगवान को देखती हैं। अवसर पाकर नृत्य करती है और उल्लास पूर्वक प्रभु के गुण गायन करती हैं।

१९. इस प्रकार सद्गुणों को मन में धारण कर प्रभु को भेंट कर हर्षित चित्त होकर श्रीसंघ अपने घर लौटा, मणि-माणिक और रत्नों से वधाया गया।

२०. ऐसे अभयधर्म गणि ने नगरकोट के भुवन दिनकर आदिनाथ जिनेश्वर की यात्रा कर वंदन नमस्कार और विविध प्रकार से भक्ति पूर्वक संस्तवना को। वे धर्मनायक, सुखदायक, देवी अम्बिका से परिवृत हैं। वह धन-धान्य करने वाली, दुर्गति निवारक और स्वामी की महिमा को अत्यन्त बढ़ाने वाली है या दुर्गति को निवारण करने वाले स्वामी अत्यन्त महिमा युक्त है।

कवि परिचय

अभयधर्म—ये खरतरगच्छीय वा० नागकुमार के शिष्य थे। सुप्रसिद्ध कवि कुशललाभ इन्हीं के शिष्य थे। कुशललाभ ने इनको 'उपाध्याय' लिखा है। सं० १५७९ में इन्होंने दश दृष्टान्त बालावबोध लिखा था—जिस की प्रति कलकत्ता संस्कृत लायब्रेरी व बाड़मेर के यति इन्द्रचंदजी के संग्रह में है। इसकी रचना श्री जिनहंससूरिजी के विजय राज्य में श्रेष्ठि करणा के आग्रह से की थी।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री साधुसुन्दर कृत नगरकोट मंडण आदीश्वर गीतम्

नाभि भूपाल कुल चंदलउ, हंस गति श्री जिणराय रे।
देव नरनाथ प्रणमइ सही, भाव करि जेह ना पाय रे॥१॥

नगरकोटइ प्रभु भेटियइ, आदि जिणेसर सार रे।
अद्भुत महिमा जेहनी, सेवतां द्यइ भव पार रे॥ आंकणी॥

कांगुड़इ देहरउ दीपतउ, देखतां होइ आणंद रे।
दुक्ख दारिद्द दूरइ करइ, सुक्ख तरुवर तणउ कंद रे॥२॥न०॥

नीरनिधि भूरि गंभीरिमा, धरणिधर सार परि धीर रे।
सोवन वर्ण सोहामणउ, पंच सय धनुष सरीर रे॥३॥ न०॥

पूजतां पाप नासइ सदा, आपदा नावए अंगि रे।
संपदा वेगि आवी मिलइ, अहनिसइ उल्हसइ रंग रे॥४॥न०॥

आगलइ नाटक नाचियइ, धरिय संगीत निज चित्त रे।
उत्तम थानक जाणि नइ, वावरइ श्रावक वित्त रे॥५॥न०॥

जननि मरुदेवि उयरइ धरचउ, गुण भरचउ सुजस निवास रे।
केवलनाण सूरिज जिसउ, करइ जिण भुवनि प्रकास रे॥६॥न०॥

तित्थ ना सुगुण इणि परि भणइ, सुगुरु साधुकित्ति पसाइ रे।
साधुसुन्दर रंगइ करी, दरसणइ तोष भर थाइ रे॥७॥न०॥

इति श्री नगरकोट मंडण आदीश्वर गीतम्

भावार्थ—

१. नाभि नरेन्द्र के कुल में चंद्रमा, हंस जैसी गति वाले जिनराज हैं जिनके चरणों में देव और नरेन्द्र भावपूर्वक वन्दन करते हैं। उन श्री आदिनाथ

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिनेश्वर को नगरकोट में वन्दन करें। उनकी महिमा अद्भुत हैं, सेवन करने से भव से पार लगाते हैं।

२. कांगड़ा में उनका देहरा सुशोभित है जिसके दर्शन से आनंद होता है। वे सुख रूपी तरुवर के कन्द हैं और दुख दारिद्र को दूर करते हैं।

३. वारिधि की भांति अति गंभीर, धरणीधर की भांति धीर हैं। उनका पांच सौ धनुष का स्वर्णाभ शरीर सुहावना है।

४. पूजन करने से पाप नष्ट होते हैं, अंग में कभी आपदा नहीं आती। शीघ्र ही संपदा प्राप्त होती है और रात दिन आनंद उल्लास रहता है।

५. अपने चित्त में संगीत-लय धारण करके प्रभु के आगे नाटक-नृत्य करना चाहिए। श्रावक लोग उत्तम स्थान ज्ञात करके अपने वित्त-धन का सद्व्यय करते हैं।

६. माता मरुदेवी ने जिन्हें कोख में धारण किया था, गुणों से परिपूर्ण, सुयश के निवास-स्थान हैं। वे जिनेश्वर केवलज्ञान से सूर्य की भांति लोक में प्रकाश करते हैं।

७. इसी प्रकार साधुकीर्त्ति सद्गुरु की कृपा से साधुसुन्दर आनंदपूर्वक तीर्थ के सद्गुणों को कहते हैं, दर्शनों से भरपूर संतुष्ठि होती है।

कवि परिचय

साधुसुन्दर—ये सुप्रसिद्ध खरतरगच्छीय विद्वान साधुकीर्त्ति उपाध्याय के शिष्य थे। आपका रचना काल १७ वीं शती का उत्तरार्द्ध है। आपकी रचनाएँ—१. उक्ति रत्नाकर, २. धातु रत्नाकर (सं० १६८० दीवाली), ३. शब्द रत्नाकर, ४. अरनाथ स्तोत्र सावचूरि, ५. शांतिनाथ स्तुति वृत्ति ६. पार्श्वनाथ स्तुति आदि उपलब्ध हैं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री मुनिभद्र रचित

संघपति वीकमसीह रास

पणमवि आदि जिणंद देउ अनु अंबिकदेवी।
सरसति सामिणि पय नमेवि वांघुल पय सेवो॥
वंदिवि गुरु मुनिसिहरसूरि मनि हरिसु धरेवी।
संघपति वीकम तणउ रासु पभणिसु विहसेवी॥१॥

जंबूदीवह भरहखेत्रि घण घन्न समिद्धउ।
वावि कूव आरामि पवरु भटनयरु पसिद्धउ॥
राजु करइ दुलची नरिंदु अरियण दल भंजणु।
न्यायवंतु शीलिहिं संजुत्तु यादव कुल मंडणु॥२॥

नागदेव सुत पंच प्रथम खिमधरु पभणीजइ।
बीजउ गोरिकु संघपत्ति फम्मणु सलहीजइ॥
चउथउ कुलधरू पंचमउ कमलउ जगरंजणु।
ए तिणि नगरिहि पंच पुरुष पंचइ अरिगंजणु॥३॥

तिहि निवसइ खिमधरु सुसाहु नगदेवह नंदणु।
रिद्धिमंतु जिणपूय रत्तु नाहर कुल मंडणु॥
तासु पुत्तु सूंगउ पवित्तु ठकुरु गुण सायरु।
गुल्लउ गुज्जउ गुण विसालु कुल गयण दिवायरु॥४॥

सुंगा नंदणु पढमु सघरु सिरचंदु सलक्खणु।
बारह व्रत संलीनु बीउ उद्धरु कुल भूषणु॥
तोडाही तसु घरणि पुहवि निम्मल मनि सत्थे।
विणय विवेय अलंकरिय किरि पच्चख लच्छे॥५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तासु कुखि सरि रायहंस विक्कउ सुविचारो।
भुल्लणु केल्हण गुणनिहाणु गुन्नउ जगि सारो॥
वीरधवलु धुरि धवलु धम्मि लीला गोविंदो।
सोहइ इणि परिवार जुत्त जणु पूनिम चंदो॥६॥

धीरु वीरु गंभीर चित्त जिण सासण मंडण।
विणय विवेय विचार सार दालिद्द विहंडण॥
निय गुण रंजिय पुहवि लोय तं संख न जाणउ।
उद्धर सुय सुरतरु समान मन रंगि वखाणउं॥७॥

॥ घात ॥

वंशि नाहर वंशि नाहर कुलह सिंगार
साहु राय नगदेउ थुणि खेमंधरु जसु पुत्त सुहकरु
तसु नंदणु सूंगउ सगुण तासु पुत्तु उद्धरु भणिजइ
पुत्त रयण साह सधर वीकमसी सुविचारु
बंधव सउं जगि चिरु जयउ जिम तारायण राउ

प्रथम भाषा

अन्न दिवसि मेलवि परिवारो, पूछइ वीकमु नियमणि सारो।
आइ जिणेसरु जइ वंदीजइ, सयल सुखु संगमु पामीजइ॥१॥

संघ पुरिस सह जिहि सलहीजइ, भुल्लण किरतइ इम पभणीजइ।
वीरधवलु सरसइ पेखीजइ, गुणरायह सउं मंतु करीजइ॥२॥

भेटिउ तिणि माणिकदेउ मलिकु, अरियण सेणि सुहड वरु इकु।
तूठउ मलिकु देइ कुलह कवाए, करउ जात निय मणि उच्छाहे॥३॥

बड़ गच्छिहिं मंडण युगपवरो, वादी सिरिदिवसूरि गणहरो।
अट्ठकम्म गय घण पंचायणु, सावय रंजणु अमिय रसायणु॥४॥

तसु अनुकमि मुनिसेहरसूरे, असुह नाम पय नासहि दूरे।
सिरि सिरितिलयसूरि तसु सीसो, भविय कमल पडिबोहण दीसो॥५॥

तसु पट्टोयहि चंद समिद्धउ, भद्देसरसूरि नामि पसिद्धउ।
तसु आएसिहिं भलइ मुहुत्तेहिं, जत्तारंभु करइ निय सत्तिहिं॥६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सरसइ पुरवरि मेलवि संघो, भवियह पाप जलह उल्लंघो।
चल्लिउ तउ घरतउ घर डंबरु, नीसाणह रवि गज्जिउ अंबरु ॥७॥

तहि हयवर खुर रवि गिरि गज्जइ, चोर चरड़ मारगि सवि सज्जइ।
पण दोलिय चिंधणह कहिं, दाणु पिक्खि जण चित्ति चमक्कहिं ॥८॥

गायण महुर सद्दि गायंति, अइ हरिसब्भरि भट्ट पढंति।
गुणि गरुयउ अनु गरुय परिक्कमु, इणिपरि चालिउ संघपति वीकमु ॥९॥

वीठणहडइ जाम पहूतउ, संघ लोक मणि हरिसु वहंतउ।
तहि पुरि मिलियउ संघु सरसइ कउ, पारु न पामइ मग्गण जणकउ ॥१०॥

॥ घात ॥

नगरकोटह नगरकोटह जात्र आरंभि
फुरमाण दुलची निवह लेवि लेवि चित्ति उच्छाहु धरतउ
भद्देसरसूरि गुरु वयणु एकि चित्ति मनि रंगि करतउ
पहुतउ आडंबरि गहिय वीठणहंडइ जाम
पुर सरसइ कउ तहि मिलिउ संघु अणगल ताम ॥१॥

द्वितीय भाषा

तहि पुरि जीमणवार करि, वीकम रंजिउ चित्तु।
त लोक सयल इणिपरि भणहि, इणि किउ वित्त पवित्तु ॥१॥

(त) तलवंडी आवेवि तहिं, सगृहीय जीमणवार।
त ह्लवण महाधज पास जिण, मंदिरि किय सुविचार ॥२॥

त पहुतउ लोद्रहाणइय, सतलुद्र नई कइ तीरि।
त दीसइ पश्चिम अवतरिय, गंगा जाम सरीर ॥३॥

त तहि आवासिउ संघु सहु गूडर चउरा ताणि।
त जउ दीसइ विस्तारु तहि कोसइ एक प्रमाणि ॥४॥

त वइसाहइ सुदि पूनिमइ स्वातिनखत्रि गुरुवारि।
त करक लगनि दस घडिय दिणि सुभ ग्रह तणइ प्रचारि ॥५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

त आणंदिहि कुलगुरि कियउ तिलकु भद्रेसरसूरि।
त करमिणि कंतिहि संघवइ विघ्न किया सवि दूरि ॥६॥

(त) दानिहि कनु अनंत गुण वीरधवलु तसु भाउ।
त तूसवि परमेसरि दियउ अधिकउ जासु पसाउ ॥७॥

त तहि संघि पहिलउ मांडलियउ लोढा कुलि घणसीहु।
त बीजउ नाहर कुलि तिलउ रूपउसाहु अबीहु ॥८॥

त त्रीजउ खरतर गण भगतु भीमाउतु घडसीहु।
(त) सूरा नंदणु सूरवरो चउथउ रत्तनसीहु ॥९॥

त सेलहत्थु नाहर कुलिहिं बाऊ पुतु वणवीरु।
त देवराजु पच्छिवाणु तहिं पूना सुतु छइ वीरु ॥१०॥

त पुण्यवंत संघपति भणउ सुरजनु आसू पुत्तु।
त फेरु पुत्तु पाल्हउ तहय लोढा वंसि पवित्तु ॥११॥

तहि कमलउ खेडा तणउ खंडिलवाल अवयंसु।
त साल्हउ कुमरपाल तणउ निज न्यातिहि पसंसु ॥१२॥

त अनु साधूमांडू तणउ अच्छइ अतिहि सुविचारु।
(त) वीकमि संघपति थापिय ए संघपति सात उद्धा (? दा) रु ॥१३॥

॥ घात ॥

गरुय उच्छवि गरुय उच्छवि देवितहि दाणु।
तलवंडी आवि ए जीमणवार सगृही करेविणु।
लुद्रेहाणइ वर नयरि कियउ तिलकु जिणु मनि धारेविणु॥
सातइं संघवइहिं सरिस पड़िलाभण किय सार।
वीकमु संघपति चालियउ सयल संघि परिवार ॥१॥

तृतीय भाषा

कोठीनयरि मझारि मेल्हइ सकट संजुत्त तहि।
तुरियन पारावार लांघहि डुंगर विसम तहिं ॥१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पालिय चालहि नारि उद्धर सुय गुण गायतीय।
कोकिल सद्द सुहाइ मोर लवइं तहि पंथि थिया ॥२॥

डुंगर झरणि झरंति नारि भणइ प्रियतम रहो न।
वाइं सुरभि समीर छाह भली घण वण गहण ॥३॥

पहुता लाहड़कोटि सरसा नउ संघ मिलियउ तहिं।
वीकमु संघपति देइ मग्गत जण कंचण लहइं ॥४॥

निय करि पट्ट दुकूल पडिलाभण मुणिवर गणह।
भाटह कुलह कबाइं संतोसइ चारण जणह ॥५॥

पहुतउ नंदवणि संघु हरिसिउ विक्कमु संघवए।
पूजिउ तिहुयणनाहु वीरु जिणेसर वंदिजए ॥६॥

चामर धज भिंगारु कलस कंचणमइ तहि ठवई।
तहि थिउ चालइ संघु मन रंगि लोय विपाश तरइं ॥७॥

क्रमि क्रमि पहुता जाइं नगरकोटि कोटह तिलउं।
पइसारइ किउ (उ)च्छाहि वीकमु संघपति गुण निलउ ॥८॥

पहिलउ वंदिउ वीरु जिणवर चउवीसमउ पुणु।
न्हवण विलेवण पूज मनरंगि गायहिं जिणह गुण ॥९॥

पीथड़ साहि विहारु आदि जिणेसरु पूजियउ।
सोलसमो जिण शांति पूज करि मन रंजियउ ॥१०॥

कांगड़इ आदि जिणिंदु संघपति वीकमु पूज करई।
अंबिक तणइ प्रसादि दुरिय जलहि निय भुय तरहिं ॥११॥

भेटिउ हरिसिहि जाइं भूपति राउ संसारचन्दु।
तिणि दीघउ बहुमान भोग पुरंदरू गरूय दंदो ॥१२॥

कामिणि मन उछरंगि रासु दियइ जिणवर भुवणि।
धनु धनु ताह नरांह जिणवरु दीसइ जिह नयणि ॥१३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

।। घात ।।

विसम गिरिवर विसम गिरिवर गरुय लंघेवि
लाहड़गढि संघ किहि करवि भत्ति सन्तोष सिरवरि
नन्दवणि जत्त किय नगरकोटि संपत्त सुहकर
चहुय पसाइ अठाहिय पूज महाधज देवि
वोकम संघवइ भाव करु दाणु अणग्गलुदेइ ॥

चतुर्थ भाषा

लीधउ ए चांदइ साहि इन्द्र पदो घण वेचि करे।
हूवऊ ए न्हवणु जिणेसु पूज्यउ निय मणि रंगु धरे ॥१॥

वसु बन्धव ए वोधउ साहु वेचइ वित्तु अणंतु तहिं
दीधि ए कुलह कवाइं संसारचन्दि नरिंद वरि ॥२॥

गायहि केवि सुजाण गुणगण वीरधवल तणा ए।
धनु धनु ए ऊवरु साहु धनु माता जिणि जाइयउ ॥३॥

रूपिहि मदन समाणु दानिहि करणु अलंकरिउ।
भुजबलि ए भीमु वदीतु सुधिय पणय सुरगुरु समउ ॥४॥

दालिदए गंजणु ए म(न) रंजणु रायह रूव वरो।
अत्तिहि ए अछइ सुविचारु वीकमु संघपति जाणियइ ॥५॥

चालिय ए पुण घर रेसि मुकलाविवि सिरि आइ जिणु।
क्रमि क्रमि ए संघ सहितु पहुतउ सिरि भटनयर पुरे ॥६॥

बंधव ए करइं उच्छाहु रंज्यउ दुलची राउ ताहिं।
पहिरावइ ए बंधु सहितु वीकमु मनि आणंदियइ ॥७॥

वडगच्छ ए मंडण भाण मुनिसेहरसुरि सूरि वरो।
तसु सीसिहि ए कीधउ रासु मुनिभद्रि मुनिवरि सुहदिणिहिं ॥८॥

अंबिक ए सासण देवि वांधुलदेवि पसाइ हिव।
बंधव ए सउ संघपति वीकागरु जगि चिरुजयउ ॥९॥

॥ इति श्री संघपति वीकमसीह रासः समाप्तः ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—

१. आदि जिनेश्वर देव को प्रणाम करके और अंबिका देवी, सरस्वती के चरणों में नमस्कार कर कुलदेवी वांघुल की चरण सेवा कर, गुरु महाराज श्री मुनिशेखरसूरि को हार्दिक हर्ष पूर्वक वन्दन कर संघपति विक्रमसिंह (वीकम) का रास विकसित चित्त से कहूंगा।

२. जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में धन-धान्य से समृद्ध, वापी, कूप, उद्यानादि से प्रवर भटनेर (नगर) प्रसिद्ध है, जहाँ शत्रु सेना को पराजित करने वाला, न्यायप्रिय, शील गुण सम्पन्न, यादव कुल का शृंगार नरेन्द्र दुलची (राय) राज्य करता है।

३. उस नगरी में नागदेव के पांच पुत्र—प्रथम खिमधर, द्वितीय गोरिक, तीसरा संघपति फम्मण चौथा कुलधर और पांचवाँ जगत को रंजन करने वाला कमल—हैं। ये पांचों शत्रुओं का नाश करने वाले पंच-पुरुष हैं।

४. वहाँ नागदेव का नन्दन साह खिमधर निवास करता है जो ऋद्धिवान, जिनेश्वर की पूजा में रत, नाहर कुल का मण्डन है। उसके पुत्र सूंगउ, ठकुरु, गुल्लउ, गुज्जउ, पवित्र गुणों के सागर, विशाल गुणों वाले और अपने वंश रूपी गगन में सूर्य की भाँति हैं।

५. सुंगा का प्रथम पुत्र शुभ लक्षणों वाला सुदृढ श्रीचंद और दूसरा उद्धरु है जो बारह व्रतधारी और कुल का भूषण है। उसकी धर्मपत्नी तोडाही पृथ्वी पर निर्मल चित्तवाली है और विनय विवेकादि गुणों से अलंकृत मानो साक्षात् लक्ष्मी है।

६. उसके कोख रूपी सरोवर में राजहंस, सद्विचारशील १ विक्कउ (विक्रमसिंह), २ भुल्लणु, ३ केल्हण, ४ गुन्नउ ५ वीरधवल (पांच भ्राता) जगत में सारभूत गुणों के निधान, धर्म रूपीधुरा को धारण करने में वृषभ और लीला में गोविन्द की भांति इस परिवार संयुक्त मानो पूर्णिमा के चन्द्रमा की भांति सुशोभित है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

७. धीर, वीर, गंभीर चित्त वाले, विनयवान, विवेकी, सद्विचारशील, जैन शासन के शृंगार, दारिद्रनाशक, अपने असंख्य गुणों से पृथ्वी के लोगों को रंजित किया है ऐसे उद्धर के पुत्र कल्पवृक्ष के सदृश हैं, जिनका मैं प्रसन्न चित्त से वर्णन करता हूं।

१. नाहर वंश के अलंकार भूत श्रेष्ठिराज नागदेव, उसका स्तुत्य पुत्र सुखदायक खेमंधर हुआ उसका नंदन सूंगउ सद्गुणी था जिसका पुत्र उद्धरु हुआ। उसका पुत्ररत्न सद्विचारशील और साहसी वीकमसी (विक्रमसिंह) अपने भ्राताओं के साथ तारामंडल में चंद्र की भांति चिरकाल जयवंत है।

१. एक दिन सारे परिवार को एकत्र कर वीकम ने अपने मन की सार बात कही—यदि आदि जिनेश्वर को वंदन करें तो सभी सुखों का संगम प्राप्त हो।

२. भुल्लण ने कहा—संघ के पुरुषों से सहज शोभा मिले इसलिए वीर धवल को सरसा भेजकर (भाई) गुणराज से मंत्रणा की जाय।

३. उसने माणिकदेव मल्लिक से भेंट की जो शत्रुओं की सेना से (भिड़ने-वाला) एक मात्र श्रेष्ठ सुभट है। मल्लिक ने सन्तुष्ठ होकर शिरोपाव दिया और कहा कि अपने मन के उत्साह पूर्वक यात्रा करो।

४. बड़गच्छ मण्डन युगप्रवर गणधर श्री वादिदेवसूरि हुए जो अष्ट कर्म रूपी गज घटा के लिए सिंह सदृश और श्रावकों को रंजित करने में अमृत-रसायन थे।

५. उनके पट्टानुक्रम मुनिशेखरसूरि हुए जिनके नाम से अशुभ दूर भग जाते है। उनके शिष्य भव्य रूपी कमल को प्रतिबोध करने में सूर्य सदृश श्री श्रीतिलकसूरि हुए।

६. उनके पट्ट रूपी समुद्र से चंद्र जैसे समृद्ध श्री भद्रेश्वरसूरि नाम के प्रसिद्ध (आचार्य) हैं। जिनके आदेश से शुभ मुहूर्त्त में अपनी शक्ति के अनुसार यात्रारंभ-प्रयाण किया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

७. सरसा नामक श्रेष्ठ नगर में संघ एकत्र कर, पाप रूपी जल से पार होकर भव्य जन-संघ पृथ्वीतल पर आडंबर सहित चला, नगारा-निशान के शब्दों से आसमान गूंजने लगा।

८. घोड़ों के खुर की टाप से पर्वत गूंजता था, चोर-डाकूओं के मार्ग में सब सुसज्जित हुए। भ्रमण-शील मार्गदर्शकों को दिये जाते दान को देखकर लोग चित्त में चमत्कृत होते थे।

९. गवंये लोग मधुर ध्वनि से गाते हैं, भट्ट लोग अत्यंत हर्षपूर्वक (विरुदावली) पढते हैं, गुण और पराक्रम में गुरुतर संघपति विक्रम इस प्रकार चला।

१०. संघ के लोग मन में हर्षोल्लास वहन करते हुए जब भटिण्डा पहुँचे तो उस नगर में सरसा का संघ मिल गया, यावक जन इतने थे कि जिसका कोई पार नहीं।

१. घात—नगरकोट की यात्रा प्रारंभ हुई। दुलची नृप से फरमान लेकर चित्त में उत्साह पूर्वक भद्रेश्वरसूरि गुरु के वचनों को एकाग्र चित्त से धारणकर जब आडंबर सहित भटिण्डा पहुँचे तो वहां सरसा का विशाल संघ आ मिला।

द्वितीय भाषा भावार्थ—

१. उस नगर में वीकम ने प्रसन्न चित्त से जीमनवार किया। सभी लोग इस प्रकार कहने लगे कि इसने वित्त को पवित्र (कार्य में व्यय) किया।

२. तलवंडी में आकर घरसिगड़ी जीमनवार किया और पार्श्वनाथ जिनालय में स्नात्रपूजा महाध्वजारोप सुविचार पूर्वक किया।

३. फिर सतलज नदी के तट लुधियाना पहुँचे। ऐसा लगता था मानो गंगा नदी पश्चिम में अवतरित हो गई हो।

४. वहाँ समस्त संघ ने तंबू-डेरा तान कर आवास किया जो एक कोश तक विस्तृत दिखाई देता था।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५. मिती वैशाख शुक्ल पूर्णिमा, स्वाति नक्षत्र, गुरुवार और कर्क लग्न में दश घड़ी दिन चढने पर शुभ ग्रहों के प्रचलन में।

६. आनंद पूर्वक कुलगुरु श्री भद्रेश्वरसूरि ने कर्मिणी के कान्त (श्री वीकम) को संघपति का तिलक किया, सब विघ्न-बाधाएं दूर हुई।

७. उसका अनंत गुणों वाला भ्राता वीरधवल दान में कर्ण के सदृश है। परमेश्वर ने संतुष्ठ होकर उसे अधिक कृपा प्रसाद दिया है।

८. इस संघ में प्रथम मण्डलीक लोढा कुल का धणसीह, दूसरा नाहर कुल तिलक निर्भय रूपाशाह हुआ।

९. तीसरा खरतरगच्छ का भक्त भीमावत घडसीह और चौथा सूरा नंदन (सुराणा) शूरवीर रतनसीह (मंडलीक हुआ)

१०. नाहर कुल का सेलहत्थ, बाऊ का पुत्र वणवीर और देवराज तथा पूना का पुत्र वीरु संघ के पृष्टरक्षक थे।

११-१२-१३. अब पुण्यवन्त संघपति बतलाते हैं—आसू का पुत्र सुरजन, फेरु का पुत्र पाल्हा जो पवित्र लोढा वंश का था, खेड़ा का पुत्र खण्डेलवाल ज्ञातीय कमल, कुमारपाल का पुत्र स्वजाति में प्रशंसा प्राप्त साल्हउ और मांडू का पुत्र साधु-ये जो अति सद्विचारशील हैं, संघपति वीकम ने सात उदार संघपति स्थापित किए।

१. घात—बड़े भारी उत्सव के साथ दान देते हुए तलवंडी आकर "घर-सिगड़ी" जीमण किया। श्रेष्ठ नगर लुधियाना में जिनेश्वर को चित्त में धारण कर (संघपति-) तिलक किया। सातों संघपतियों ने साथ प्रतिलाभ (मुनियों को आहार दान) किया। सारे संघ-परिवार के साथ वीकम संघपति चला।

तृतीय भाषा भावार्थ—

१. कोठीनगर में गाडियों को छोड़ दिया और घोड़ों के द्वारा जो वहाँ अपार थे, विषम पहाड़ी मार्ग का उल्लंघन किया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

२. उद्धर के पुत्र (संघपति वीकम) के गुणों के गीत गाती हुई स्त्रियाँ पैदल ही चल रही थी उनकी साद कोकिल की भांति सुहावनी और मयूर की चाल वाली उस मार्ग की पथिक हो गई।

३. पहाड़ी झरणों को पानी झरते देख स्त्रियाँ कहती हैं—प्रियतम यही रुको न ! सुगंधित हवा चल रही है और गहन वन की छाया बहुत ही भली (लगती) है।

४. लाहड़कोट पहुँचने पर वहाँ सरसा का संघ मिला। वीकम संघपति देता है और याचक जन कंचन-सोना पाते हैं

५. मुनिराज लोगों को अपने हाथ से वस्त्र दुशाले आदि वहराने का लाभ (प्रतिलाभ) लिया। भाट लोगों को, चरणों को शिरोपाव देकर सन्तुष्ट किया।

६. संघ के नंदवणि-नंदौन पहुँचने पर विक्कम संघपति हर्षित हुआ। त्रिभुवन नाथ जिनेश्वर वीर प्रभु का वन्दन-पूजन किया गया।

७. चामर, ध्वज, शृङ्गार और स्वर्ण कलश वहाँ स्थापित किये। संघ वहाँ से प्रसन्नता पूर्वक चला, लोगों ने विपाशा (व्यासा) नदी को तिर के पार की।

८. क्रमशः कोटों में तिलक सहरा नगरकोट में जा पहुँचा। गुणों के निलय संघपति वीकम ने उत्साह पूर्वक प्रवेशोत्सव किया।

९. पहले चौबीसवें जिनेश्वर वीर प्रभु को वन्दन किया फिर न्हवण विलेपन पूजा करके प्रसन्नता पूर्वक जिनेश्वर के गुणों (के स्तवन) को गाने लगे।

१०. पीथड़शाह के विहार (मन्दिर) में आदिनाथ जिनेश्वर की पूजा कर चित्त को प्रसन्न किया।

११. कांगड़ा में संघपति वीकम ने आदि जिनेन्द्र की पूजा की, अम्बिका के प्रसाद से दुरित रूप समुद्र को अपनी भुजाओं से पार किया।

१२. भूपति राजा संसारचन्द्र के पास जाकर हर्षपूर्वक भेंट की। उसने भोग पुरन्दर संघपति को बहुमान दिया।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१३. जिनेश्वर के मंदिर में महिलाओं ने उत्साह पूर्वक रास खेला। वे मनुष्य धन्य धन्य हैं जिन्होंने जिनेश्वर को देखा।

घात—विषम-गुरुतर पहाड़ो का उल्लंघन कर लाहड़ गढ में संघ की भक्ति करके संतोष श्री पाई। नंदौन की यात्रा कर सुखदायी नगर-कोट पहुंचे। चारों प्रासादों में अष्टाह्निका पूजाकर महाध्वज चढ़ाकर विक्रम संघपति ने भाव पूर्वक अनगल दान दिया।

चतुर्थ भाषा भावार्थ—

१. चांदासाह ने द्रव्य देकर इन्द्र पद लिया, जिनेश्वर का न्हवण हुआ, अपने चित्त में प्रसन्नता धारण कर पूजा की।

२. आठों संघपति बन्धुओं ने, वीधउ साह ने अपार द्रव्य दिया। संसार चंद्र नरेन्द्र ने श्रेष्ठ शिरोपाव दिए।

३. कई सुज्ञानी वीरधवल के गुणों को गाते हैं कि धन्य! धन्य! ऊधरु साह (पिता) और धन्य माता है जिसने इन्हें जन्म दिया।

४. रूप में कामदेव के समान, दान में कर्ण जैसा, भुज बल में भीम जैसा विदित होता है और विद्वानों से प्रणत वृहस्पति जैसा अलंकृत है।

५. दारिद्र का नाश करने वाला, राजाओं को प्रसन्न करने वाला, श्रेष्ठ रूपवान, अत्यन्त सद्विचार शील संघपति वीकम है—यह जानना।

६. श्री आदिजिनेश्वर की मोकलो यात्रा कर पुनः घर की ओर लौटे और क्रमशः संघ सहित भटनेर नगर पहुँचे।

७. भाइयों ने उत्साह पूर्वक (स्वागत) किया, दुलचीराय प्रसन्न हुआ और उसने हार्दिक आनंद पूर्वक बंधुओं के साथ वीकम को पहिरावणी की।

८. वड़गच्छ मंडन भानु, सूरिश्रेष्ठ, मुनिशेखरसूरि थे। उनके शिष्य मुनिवर मुनिभद्र ने शुभ दिन में इस रास की रचना की।

९. शासन देवी अम्बिका और वांधुल देवी के प्रसाद से संघपति वीकागर (वीकम) बन्धुओं के सहित जगत में चिरकाल जयवंत रहे।

श्री संघपति वीकमसीह का रास संपूर्ण हुआ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

टिप्पणी—

१. इस रास के प्रारंभ में ऋषभदेव, अम्बिका और सरस्वती को नमस्कार करने के साथ वांधुल देवी को भी याद किया है तथा अंत में भी उसका नाम है अतः यह वड़गच्छ या नाहरवंश की कुलदेवी मालूम देती है।

२. रासकार मुनिभद्र अपने गुरु मुनिशेखरसूरि को नमस्कार करता है और अन्त में भी अपने को उनका शिष्य बतलाया है।

* मुनिशेखरसूरि—ये मुनिरत्नसूरि के पट्टधर ये। ये प्रभावक आचार्य होने के कारण वड़गच्छ में इनके नाम से कायोत्सर्ग किया जाता था। भटनेर में व्याख्यान देते हुए शत्रुंजय पर लगी हुई अग्नि को हाथ से बुझा दिया था यतः—

यैः पूज्येर्भट्टीद्रंगस्थै व्याख्यानावसरे मुदा।
श्री शत्रुञ्जय गिरेरग्नि हस्ताभ्यामुपशामिता॥

सं० १३८७ और सं० १३९३ के इनके अभिलेख पाए जाते हैं। इनके शिष्य श्रीतिलकसूरि हुए जिनके पट्टधर भद्रेश्वरसूरि के समय यह संघ निकला था।

* श्री भद्रेश्वरसूरि—ये दूगड़ गोत्रीय थे और आचार्य पद स्थापना से पूर्व भी ये भट्टारक की भांति प्रभावशाली थे। इनके प्रतिष्ठा किए हुए लेख उपलब्ध हैं जिनमें से एक नाहर वंश का निम्नोक्त है—

संवत् १४३६ वैशाख सुदि १३ सोमे श्री नाहर गोत्रे सा० श्री राजा पुत्रेण सा० भीमसिंहेन स०..... पार्श्व बिं० का० प्र० वृ हद्वच्छे श्री मुनिशेखरसूरि पट्टे श्रीतिलकसूरि शिष्यैः श्री भद्रेश्वरसूरिभिः।

३. उस समय भटनेर में दुलचीराय राज्य करता था यह वही दुलाचंदराव है जिससे सन् १३९१ (सं० १४४८) में तिमूर ने भटनेर ले लिया था। अतः इस संघ निकलने का समय वि० सं० १४४८ से पूर्व निश्चित है। इसके बाद भटनेर पुनः दुलचीराव के वंशजों को प्राप्त हो गया और सं० १४८७ में जब संघपति खीमचंद का संघ भटनेर से शत्रुंजय गिरनारादि तीर्थों को गया तब भी राय हमीर का राज्य था।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

इस संघ-यात्रा के समय नगरकोट का राजा संसारचंद था जिसने संघपति वीकमसिंह को सम्मानित किया था अतः संसारचंद का राज्यकाल यही निश्चित होता है। विज्ञप्ति-त्रिवेणी (पृ० ९३) में श्री जिनविजयजी ने लिखा है कि कनिंगहाम साहब ने सन् १९०५-०६ की रिपोर्ट में लिखा है कि उन्होंने अम्बिका देवी के मन्दिर के दक्षिण की दिशा में स्थित मन्दिर की जिन प्रतिमा की गादी का लेख पढ़ा था कि—यह मूर्त्ति प्रथम संसारचंद्र के राज्य में सं० १५२३ में बनाई गई थी। × × इसके नीचे दिया हुआ कुछ अस्पष्ट लेख है। इस रास से संसारचंद राजा का समय सं० १४४८ से पूर्व का निश्चित हो जाता है तब कनिंगहाम साहब के सं० १५२३ लेख में संसारचंद का समय मानना गलत हो जाता है। संभव है आगे उसके वंशजों के नाम हों जो घिस गये होंगे।

४. संघ-यात्रा के निकलने से पूर्व संघपति वीकमसिंह का भाई वीरधवल अपने भाइयों से सलाह लेने सरसा जाता है, उस समय सरसा का स्वामी माणिकदेव मलिक था जिसने सम्मानित कर संघ निकालने की अनुमति दी थी। इस शासक के विषय में विशेष अन्वेषणीय है।

५. इस संघ यात्रा में सरसा, वीठणहंडइ (भटिण्डा), तलवंडी, लोद्रेहाणय (लुधियाना), लाहड़कोट, नंदवणि (नंदौन), कोठी नगर, नगरकोट, आदि नगरों के नाम है। यह संघ भटनेर से कांगड़ा तीर्थ यात्रार्थ गया था। रास्ते में सतलुद्र (सतलज), वाण गंगा, पाताल गंगा आदि नदियां आई थी।

इस संघ में ७ संघपति, ४ मंडलीक (मांडलियउ) और ४ पृष्ठरक्षक (पच्छिवाणु) स्थापित किए गए थे। जिनके गोत्र नाहर, लोढा, सूराणा, भीमावत (खरतरगच्छीय) एवं खंडेलवाल भी थे। पंजाब में खंडेलवाल जाति वाले प्रारंभ से ही श्वेताम्बर जैन धर्मानुयायी थे और आज भी हैं जिनके ओसवालों के साथ वैवाहिक संबंध होते हैं।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

दोनों रासों के अनुसार संघपति का वंश-वृक्ष इस प्रकार है—

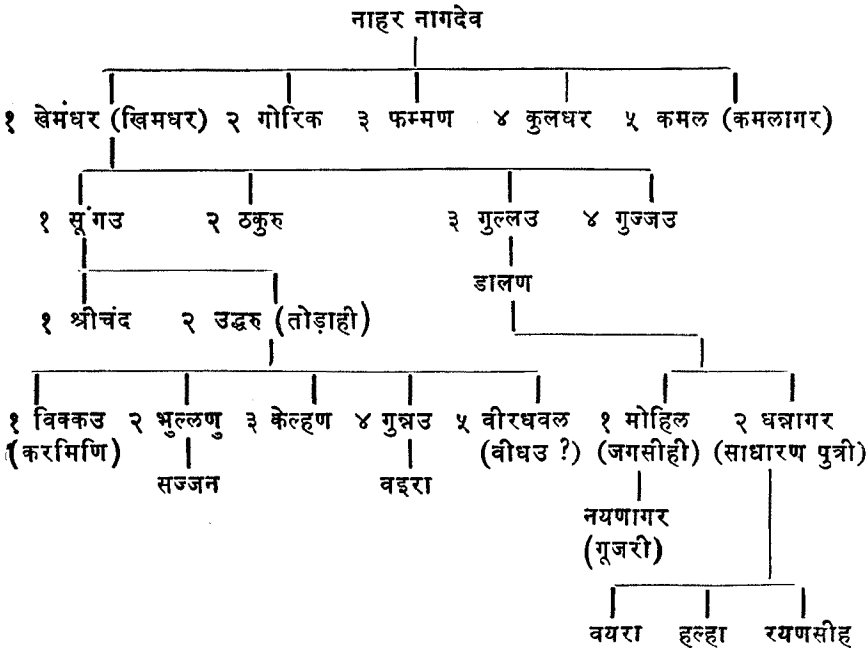

* इस रास में संघपति वीकमसिंह के वीकम, वीकमु, वीकमसी, विक्कउ और वीकागरु नामक तत्कालीन अपभ्रंश पर्याय हैं जिसका संस्कृत रूप विक्रमसिंह है। खिमधर और खेमंधर एक ही व्यक्ति है। राजा दुलाचंद इसमें दुलचीराय है। वस्तुतः इसका संस्कृत पर्याय दुर्लभचंद होगा।
* इस रास में प्रारंभ में ७ छंद, फिर एक एक घात और एक एक भास है कुल ४ घात और भास की गाथाएं १०; १३, १३, ९ हैं। कुल पद्यों की संख्या ५६ हो जाती है।
* संघपति तिलक लुद्रेहाणय में कुलगुरु श्री भद्रेश्वरसूरि ने किया और सरसा का संघ लाहड़ कोट में आकर सम्मिलित हुआ था।

सं० १४७९ में इसी नाहर वंश के संघपति नयणागर ने भटनेर से मथुरा तीर्थ का संघ निकाला था तब बड़गच्छ के आचार्य मुनीश्वरसूरि ने संघपति तिलक किया और उस समय राय हमीर भटनेर का राजा था। उस रास को श्रीमुनीश्वरसूरि के शिष्य रत्नप्रभसूरि ने बनाया है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कवि मेघराज गुंफित

श्री नगरकोट्टालङ्कार-आदिजिन स्तवनम्

हार-बंधमयम्

जगज्जीवनं पावनं यस्य वाक्यं, महोक्षध्वजं चक्र गाङ्गेय कायम् ।
तिरस्कृत्य कर्म स्थितंजन्तु तातं, श्रयेतं मतिश्रीकृते तीर्थराजम् ।।१।।

गलन्त्याशु पापान्यनन्तानि तानि,
प्रसर्प्पन्त्य गण्या मुद श्चाव दाता ।
महासिद्धिरायाति कीर्त्तिश्चकास्ति,
प्रभो त्वांनमस्कुर्वतां शान्त मूर्त्तिम् ।।२।।

छेकः कष्टोच्छेदने दीप्त भानु-
र्भक्तस्यानुच्छेष्टदो भीति भेदी ।
युक्तया युक्तः स्वागमागाध वाक्यः,
सिद्धये रोद्धा युग्मि धर्म क्षतागाः ।।३।।

दिष्ट्या दृष्टे तेऽम्बुजो ज्जिष्णु वक्त्रे,
दूरं नष्टा ऽऽदिप्रभो क्लेश राजिः ।
नन्वा रूढे भास्करे पर्वतं तं,
ध्वान्तं किं न क्षीयते निष्कलापम् ? ।।४।।

रया पार संसार नीहार सूरं
रजो भार संहारणा सार नीरम् ।
कृपालुं रसालं महाधीवरं सत्
प्रभावं महामोऽञ्ज साऽधीश्वरं तम् ।।५।।

तरन्ति सन्तो विपदर्णवं ते, पोतायितं येऽनुसरन्ति तेऽदः ।
नतं पदाब्जं भुवि सावधाना, यस्मान्मनुष्येष्वथ शर्म्म भावि ।।६।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जगत्प्रभुः सत्य नयः स्वयम्भूः
स्वाद्वाद्य जन्मा निहतान्तरायः।
तेनो मयस्तात्त्विक योग गम्यो,
जीयागते हृत्व मद्याद्रि वायो ! ॥७॥

गीर्वाण पद्माप्य तिशायिनी सा, तावच्च गीयेत मरुद्गवीशा।
बुधैर्नयावद्वहुधां हि भक्तेः, शक्तिः प्रबुद्धा जिनतेऽस्त बाधा ॥८॥

जन्म भूषित निजायत वंशं, देशना जनित भव्य शिवायम्।
साधितेष्ट सुख सङ्गम रङ्गं, भद्र सान्द्रमभिनौमि सदङ्गम् ॥९॥

राका शशाङ्काननमादिदेवं,
वन्दे युगादौ जगदुद्धरन्तम्।
तं रङ्ग दुत्तङ्ग यशः सुरंहं
हरत्तमं लोक भवोरुकाराम् ॥१०॥

नय प्रभो ! सेवक मात्म सङ्गं जय प्रभावो द्वलितान पङ्क।
नमन्महाराज कृतोरु भाग धेय ! प्रयच्छा विकलं चरित्रम् ॥११॥

वरं गृहं हाव वती च नारी, वर्ण्या तु लक्ष्मो भवतोऽनुभावात्।
वरेण्य लावण्य वचास्ततोऽहं, वहे तवाज्ञां भवने शिवाय ॥१२॥

दर्शनं दुरित रोधि तावकं
नाभि-नन्दन ! भवेद्भवावधि।
मज्जतान्मम मनो हिमरश्मि-
स्त्वद् गुणामल महाम्बुनिधौहि ॥१३॥

महामोहमाद्यत्तमः स्तोम भानो रखण्डोत्तम ज्ञान सङ्केत वास्तोः।
त्रस स्थावर प्राणि मोहान्तकस्य, स्तवासूत्रणात्ते जनः स्याद नंहाः ॥१४॥

रवीन्दु प्रदीप प्रभूत प्रभाभ्योऽधिकं विस्फुरद्दर्शनं तेऽद्य जातम्।
दयार्द्रास्वदृष्टित्वमातिष्ठिपश्चेत् सुधाम्भो मदङ्गे नचित्तेविभाति ॥१५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

षडंह्रिवत्खेलतु पाद पङ्कजे
तवा रुषं मे हृदयं सभन्द !
कृता श्रियार्थे हि कृति प्रकाण्डा,
यत्रासकृत्स्वद्रुमतां वदन्ति ।।१६।।

दलन्तं दरं भन्द माकन्दराधं, दया कन्दली कन्द मानन्द सारम् ।
नतस्त्वां शुभंयुः कुकर्माण्य धस्तात्, प्रकर्त्तास्मिकहीशनभ्रामरःस्राक् ।।१७।।

धराधीश धीरं महोदध्यगाधं, निरस्त क्रुधं प्रावृषेण्याब्द नादम् ।
लसन्मुक्ति लक्ष्मी वरं मुक्तमोहं, महामोऽमल ज्ञानमानन्दतोऽमुम् ।।१८।।

रोचिर्वीची प्रोल्लसद्देह देशे,
सौम्याकारोत्प्रेक्षितान्तः प्रमोदे ।
शेष स्फूर्जद्योगलम्भ प्रविष्टे,
दृष्टेऽधीशे जायता मिष्टलाभः ।।१९।।

व्योम्नो मानं वेत्ति यौऽज्ञः प्रकारै-
बुद्धया काव्योऽप्येषुते तीर्थराजः ।
नो सोपीशो यद्गुणान् जल्पिसुं ही
तत्को मानो मेऽत्र मूर्खन्व भाजः ।।२०।।

यदाहुश्चिदानंद सन्तान रूपं
श्रितानां भयघ्नं परब्रह्मयाताम्
दयालो ! तदेव त्वदीयं प्रपद्ये
शरण्यं पद द्वन्द्वमाविष्कृतायम् ।।२१।।

जयति जगता मतिच्छेदी युगादि जिनः परं,
तदनु विजयन्ते योगीशा बुधा जयसागराः ।
तदधि महिम स्तोत्रं हारं तदन्ति षदः कृतिं
दघ ल मुरो देशे भव्यो जनो जयतादयम् ।।२२।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जन्म जीवित गिरां सफलत्वं
मङ्गलंच वृषभेश ! ममाद्य ।
यत्नतोऽसम समां सनितान्तं,
यन्महावृषगते ऽधिगतोऽसि ।।२३।।

इति हि नगर कोट्टालङ्कृते रादिनेतुः
स्तवनभजतिपूर्णं हारबन्धाभिधानम्
अहह ! सुकृत योगः कोऽपि मेस्फातिमागा
दिति वदति यथावत्प्राञ्जलिर्मेघराज ।।२४।।

हिन्दी भावार्थ—

१. जिसके वाक्य जगत के लिये पवित्र हैं, जो महोक्ष (वृषभ) चिह्न से अंकित है, जिसकी स्वर्णाभ काया विशाल है, जिसने अपने कर्मों को नष्ट कर दिया है, जन्तुओं के लिये जो तात समान है, उस तीर्थंकर (प्रथम तीर्थंकर) का मैं सम्यक् ज्ञान की वृद्धि के लिये आश्रय ग्रहण करता हूँ ।

२. शान्त मूर्ति ऋषभदेव को नमस्कार करने मात्र से ही अनन्त पाप नष्ट हो जाते हैं, समृद्धि का विस्तार होता है, प्रसन्नता का आगमन होता है, महासिद्धि प्राप्त होती है, कीर्ति फैलती है ।

३. कष्टों को नष्ट करने के लिये आप हथौड़ी हैं, पापों को नष्ट करने में आप दीवाल को भेदने वाली प्रचण्ड सूर्य किरण हैं, आगम वाक्यों के अगाध ज्ञान में युक्तियुक्त हैं, यौगलिक धर्म की समाप्ति में आप क्षतागा के समान सिहर हैं ।

४. जैसे विष्णु के मुख कमल को देखने से पाप नष्ट हो जाते हैं उसी तरह आदि तीर्थंकर के दर्शन से ही क्लेशों का समूह शीघ्र नष्ट हो जाता है क्या पर्वत पर उदित सूर्य रूपी आप आदीश्वर भगवान को नमस्कार करने से ही सम्पूर्ण अंधकार नष्ट नहीं हो जाता है ?

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५. इस अपार संसार से निकालने में जो समर्थ हैं, पाप रूपी धूल के भार को हरण करने में पवित्र जल है, जो कृपालु हैं, करुणावान् हैं, जो महा-नाविक हैं, जिनका प्रभाव विस्तृत है उसी ईश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ।

६. जो मनुष्य आपके चरण-कमलों में नतमस्तक हैं, तथा जो आपके वचनों का अनुसरण करते हैं वे सन्त संसार रूपी समुद्र से पार हो जाते हैं।

७. जो जगत् के स्वामी हैं, जिनके नय सत्य हैं, जो स्वयम्भू हैं, स्याद्वाद के जन्म दाता हैं, जिन्होंने अन्तराय नष्ट कर दिया है, जो पण्डितों के लिये भी दुर्गम्य हैं, ऐसे प्रभु की जय हो।

८. आपकी वाणी कमलों से भी अतिशय सुन्दर है अतएव वह देवताओं द्वारा भी गायी जाती है। विद्वान् लोग भक्तिवश आपके नय की शरण लेकर जिनत्व को प्राप्त कर लेते हैं।

९. जिसने स्वस्वरूप को प्राप्त कर लिया है, जो अष्ट सुखों के संग रमण करता है, देशना देने के कारण जो कल्याण का घर है, उस तीर्थंकर को मैं प्रणाम करता हूँ।

१०. जिसने युग की आदि में जगत् का कल्याण किया, जिसने अभिमानी देवताओं की कीर्ति का भी हरण कर लिया, जो हरि-हरादि देवताओं से भी उत्तम हैं, लोक के लिये कल्याणकारी हैं, उस आदि देव को मैं वन्दन करता हूँ।

११. प्रभो! मुझ सेवक को आप अपनी आत्मा के संग ले चलिए ताकि मैं स्वच्छ बन सकूं। हे महाराज! इस अभागे को अविकल चारित्र प्रदान करके कृतकृत्य कीजिये!

१२. जैसे सुशील स्त्री को घर की लक्ष्मी कहा गया है उसी तरह मैं मुक्ति प्राप्ति के लिये इस संसार में तुम्हारी आज्ञा का पालन करूँ यही सर्वोत्तम सुन्दरता है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१३. हे नाभि-नन्दन ! आपके दर्शन संसार रूपी समुद्र को दूर से रोक देते हैं। समुद्र से मथित चन्द्रमा आप मेरे मन को कभी नष्ट न होने वाले गुणों से पवित्र कीजिये।

१४. आपका अखण्ड ज्ञान रूपी सूर्य महामोह के अन्धकार को क्षण मात्र में नष्ट कर देता है। आपको सुनने मात्र से त्रस स्थावर प्राणी मोह से मुक्त हो जाते हैं।

१५. आपका तेज प्रचण्ड सूर्य, चन्द्रमा और दीपक से उत्पन्न प्रकाश से भी अधिक विस्फुरित है। आपकी करुणामय दृष्टि मात्र से ही भक्तजनों के चित्त अमृत कलश की तरह पवित्र हो जाते हैं।

१६. आपके चरण-कमलों में भंवरे की तरह खेलूं। पण्डित जन अपने हृदय में तुम्हारे रूप को आश्रय देकर अपने को बार-बार कृतकृत्य समझते हैं।

१७. चंवर डुलाता हुआ एवं माला पहनाता हुआ मैं उस आदि देव को नमस्कार करता हूँ, जिसने पापों का दलन कर दिया है, कषाय रूपी गुफाओं को भेद दिया है। दया रूपी बेल के मूल हैं, आनन्द के कारण हैं, शुभ कारक और कर्मों को नष्ट करने वाले हैं।

१८. पृथ्वी को धारण करने के कारण आप धराधीश हैं, महासमुद्र से भी अगाध हैं, क्रोध को निरस्त करने के कारण समय की सीमाओं से पार हैं, मुक्ति को प्राप्त करने के कारण लक्ष्मीपति हैं, मोह से मुक्त होने के कारण मैलरहित हैं तथा ज्ञान व आनन्द को देने वाले हैं।

१९. आपके देह में प्रकाशित होने वाली ज्ञान रूपी किरणें दर्शकों के मन को हरण कर रही है, इन उल्लास युक्त किरणों का जो योग पूर्वक दर्शन करता है, उसे इष्ट लाभ होता है।

२०. जो लोग आकाश के आदि अन्त को जानते हैं, अपनी बुद्धि के बल से काव्य विधाओं में भी पारंगत हैं। हे अजन्मा तीर्थराज ! ऐसे पण्डित भी आपके गुणों के वर्णन में समर्थ नहीं हैं तब मेरे जैसे मूर्ख का मूल्य ही क्या है ?

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

२१. जिसको चिदानंद की अखण्ड धारा रूप माना गया है जो आश्रितों के भय को नष्ट करने वाला है, जो ब्रह्म की तरफ ले जाने वाला है, जो दयात्म रूप है, उसी का यह शरणागत आपके दोनों पैरों की शरण ग्रहण करता है इसे कृत-कृत्य करें।

२२. जगत् के कष्टों को नष्ट करने वाले युगादि जिन की जय हो। जिसका अनुसरण करके योगीजन भी सागर को पारकर लेते हैं। भव्यजनों के हृदय में जिसका निवेश है उसी योगी की मैंने हारबन्ध छन्दों में स्तुति की है।

२३. हे वृषभेश ! आपकी स्तुति के कारण आज मेरा जन्म सफल है, जीवन सफल है, वाणी सफल है। असमर्थ होता हुआ भी प्रयासपूर्वक आपकी स्तुति करने के कारण मैं आपके हृदयगत तो हो ही गया हूँ।

२४. सुकृत योग से मैंने इन हारबन्ध छन्दों में कोट्टाल नगर में स्थित आदि नाथ प्रभु की स्तुति की है। उस आदिनाथ को मैं मेघिराज विनम्रता-पूर्वक वन्दन करता हूँ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कवि देदु कृत

श्री वीरतिलक चौपाई

वासुपूज तित्थंकर देउ, जसु तणी कला न लब्भइ छेउ।
विज्जलपुरि विधि-चइति निवेसु, वीरतिलक खेतल गउ वेसु ॥१॥

वीरतिलक वीरह कउ राउ, अम्ह उपरि तुहुं करि न पसाउ।
'देदु' भणइ वीनति अवधारि, पढउ चउपइ दुरितु निवारि ॥२॥

नगरकोटि वीरउ सुनारु, तिणि तरिउ दुत्तरु संसारु।
जिणिसरसूरि पाय बहु भत्ति, अणुसणु लेउ गयउ सुरगत्ति ॥३॥

वलि आविउ तक्खणि गुरुपासि, कहउ सामि अम्हि रहिसउ वासि।
गुरि गुण जाणिउ दिन्हु आएसु, विज्जलपुरि तुम्हि करहु निवेसु ॥४॥

वासुपूजु तित्थंकर देउ, तहि अवयरिउ सकल सभेउ।
वीरतिलकु तसु दीन्हउ नामु, भगति करइ तसु सगलउ गामु ॥५॥

प्रत्था पूरइ वांछितु करइ, दुष्ट विघन हेला अपहरइ।
तउ भविया करइ तुय भगति, वीरतिलक छइ अति घण सक्ति ॥६॥

वीरतिलकु छइ बावन (५२) वीरु, मागइ भोग अणावइ खीरु।
सुगंध पुप्फ लेउ पूजा करइ, तीह तणा रिपु लीलइं हरइ ॥७॥

किवि सोनाणी रूपा पूज, संभलि सामिय करिसउ तूज।
मन ब्भितरि छइ मोटउ भाउ, सो अम्हारउ पूरउ ठाउ ॥८॥

किवि आणइ लाडू अति घणा, पूरइं त्राट लापसी तणा।
सहु को लोभि अछइ संसारि, वीरतिलक सामी अवधारि ॥९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तुहु दरिसणु अजु दीठउ देव, मनि रलियायतु हूयउ हेव।
करि पसाउ तुह बहुली सिद्धि, तइ तूठइ हुयइ गरुई रिद्धि ॥१०॥

आवइ घरिया ऊमकारु, अभिनवु नाटकु रचइ संसारि।
खेला नच्चहि तुम्ह दुयारि, वासुपुज्ज सामी अवधारि ॥११॥

नेउर रुण रुण झणकारु, वीरतिलकु गुणवंतु अपारु।
गेवरु नच्चइ मज्झिम रयणि, वासुपुज परमेसर भुवणि ॥१२॥

निसणहु वीरतिलकु तणउ चरिउ, सुख संपइ हुयइ नासइ दुरिउ ॥आंचली॥

हिन्दी भावार्थ—

१. वासुपूज्य स्वामी तीर्थंकर देव हैं जिनकी कला का पार नहीं पाया जा सकता। उनके विज्जलपुर (बीजापुर) विधिचैत्य में क्षेत्रपाल के रूप में वीरतिलक का निवास है।

२. हे वीरतिलक वीरों का राजा! हमारे पर तुम कृपा—प्रसाद करो न! देदा कवि कहता है कि प्रार्थना स्वीकार करो! चौपाई पढो और पापों को दूर करो!

३. नगरकोट में वीरा नामक सुनार रहता था जो श्री जिनेश्वरसूरि के चरणों का अत्यन्त भक्त था। वह अनशन लेकर स्वर्ग गया, दुस्तर संसार से तिर गया।

४. वह स्वर्ग से तत्काल गुरु महाराज के पास आया और कहा—स्वामी! हमें निवास करने के लिए स्थान बतलाओ! गुरु महाराज ने गुण जानकर आदेश दिया कि तुम विज्जलपुर में निवास करो।

५. जहाँ वासुपूज्य तीर्थंकर देव का जिनालय है, चमत्कारी वह वहाँ अवतरित होकर रहा। उसका नाम बीरतिलक रखा गया, सारा गाँव उसकी भक्ति करता है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

६. वह परचे पूरता है और विघ्न बाधाएं सहज में ही दूर कर मनोवांछित देता है। वीरतिलक अत्यन्त शक्तिशाली है, अतः भव्यजन उसकी भक्ति करते हैं।

७. वीरतिलक बावन वीरों में से है। वह खीर का भोग माँगता है, सुगन्धित पुष्पों से जो पूजा करता है उसके शत्रुओं को वह लीला मात्र में दूर कर देता है।

८. कई लोग सोना रूपा से पूजा करेंगे ऐसा मन से बड़े भाव पूर्वक कहते हैं कि स्वामी, हमारी कामना पूर्ण करो!

९. कई लोग बहुत से लड्डू लाकर चढ़ाते हैं और लापसी के ढेर लगाते हैं। स्वामी वीरतिलक! यह सुनिये, सभी लोग लोभी-स्वार्थी हैं।

१०. हे देव! आज तुम्हारा दर्शन किया, अब मन में बड़ी प्रसन्नता हुई। स्वामी, कृपा करो! आपके तुष्ट होने से बहुत सी ऋद्धि और सिद्धि हो जाएगी।

११. गृहस्थ लोग घर से उत्साह पूर्वक आकर अभिनव नाटक रचते हैं। वासुपूज्य स्वामी, सुनिये आपके द्वार पर नृत्य खेल करते हैं।

१२. परमात्मा वासुपूज्य स्वामी के जिनालय में मध्य रात्रि तक नुपूर के झंकार के साथ नृत्य होता रहता है, वीरतिलक अपार गुणों वाला है। वीरतिलक का चारित्र सुनो। पापों का नाश होगा, सुख-संपत्ति होगी।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कवि हर्षकीर्त्ति कृत

नगरकोट जालपा परमेश्वरी स्तवन

नगरकोटइ नितु भेटियइजी, जागती जालपामाई।
दरसण देखतां दुख टलइजी, सेवतां सब सुख थाइ ॥१॥ नगर० ॥

जगत्र जननी जग सिरोजी, जगत्र उपावण हार।
जगति मांहि सकति जसु जगमगइजी, कोई न लोपइ कार ॥२॥ नगर० ॥

दुष्ट दानव देवी तइं हण्याजी, सारीया देव ना काज।
तुज समउ अवर न को नहीं जो, जुगि जुगि थारउ राज ॥३॥ नगर० ॥

भक्ति मनोरथ सहु फलइजी, महामाई थारइ आधारि।
सब विचि समरथ तूं सही जी, सेवकां आप साधारि ॥४॥ नगर० ॥

कांगुड़ोकोट सोहावणोजी, अति भलउ भगवती थान।
धन धन ते नर जे करइजी, जालपा देवि गुण गान ॥५॥ नगर० ॥

आजि पूगो म्हारी मनरलीजी, आजि म्हारउ नव नवारंग।
आज मइं देवी दुर्गा तणउजी, भलइ दीठउ भवण उतंग ॥६॥ नगर० ॥

सोवन मइ छत्र झलहलइजी, रुणझुणइ पाट अपार।
ऊंची ध्वजा अति लहलहइजी, जोवतां जय जयकार ॥७॥ नगर० ॥

सकल मूरति माइ परसताजी, पातिक सवि टल्या दूर।
नयण अमीरस पूरणाजी, आणंद भयो भरपूर ॥८॥ नगर० ॥

निरखतां हरख हुयो घणोजी, मेहनइ जगि निम मोर।
चलि जिम अविहड़ सुख लहइजी, चंद्र नइ देखि चकोर ॥९॥ नगर० ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

हंस तणइ मनि जिम वसइजी, मानसरोवर नीर।
मधुकर मन केतक वसइजी, गज जिम नर्मदा नीर ॥१०॥ नगर० ॥

चकविय मनि जिम रवि वसइजी, चातिक मनि जिम मेह।
जालपा चरण जोवा तणाजी, मुझ मनि अधिक सनेह ॥११॥ नगर० ॥

भगवती दरसण देखताजी, तिम मुझ हरख जगीस।
चरण कमल वलि ताहरइजी, मुझ मन वसइ निसदीस ॥१२॥ नगर० ॥

भगवती भकति भावइ करीजी, अहनिसइ जे नरनारि।
रिद्धि नइ सिद्धिसुख सपदाजी, विलसीस्यइ ते संसारि ॥१३॥ नगर० ॥

जगदंबा गुण गावतांजी, पूजतां प्रणमतां पाय।
हर्षकीरति सुख संपजइजी, जालपा माई सुपसाय ॥१४॥ नगर० ॥

इति श्री नगरकोटि परमेश्वरी स्तवन

(राजस्थानी विभाग गुटका नं० २७१)

हिन्दी भावार्थ—

१. नगरकोट में जाग्रत ज्योति जालपा माई को नित्य भेटो ! जिनके दर्शन करने से दुख दूर होते हैं और सेवन करने से सभी सुख (प्राप्त) होते हैं।

२. जगत् जननी, जगत की श्री और जगत की उत्पादक है। जगत में जिसकी शक्ति जगमगाहट करती है कोई उसकी मर्यादा भंग नहीं करता।

३. हे देवी ! तुमने दुष्ट-दानवों का हनन कर देवताओं का कार्य सिद्ध किया है। तुम्हारे समकक्ष और कोई नहीं, जुगो जुग में तुम्हारा राज्य है।

४. हे महामाई ! तुम्हारे ही आधार/भक्ति से सभी मनोरथ फलते हैं। सबों के बीच तुम ही सही सामर्थ्यशाली हो, सेवकों की आधार-भूत हो।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५. कांगड़ा कोट में अत्यन्त शोभायमान भगवती का स्थान है। वे मानव धन्य हैं जो जालपा देवी का गुणगान करते हैं।

६. आज मेरी मनोवांछा पूर्ण हुई, आज मेरे नये-नये रंग/आनंद प्राप्त हुए। आज मैंने देवी दुर्गा माता के उत्तुंग भवन का भले ही दर्शन पाया।

७. स्वर्णमय छत्र ज्वाज्वल्यमान है, देवी का पाट/सिंहासन रुण झुण ध्वनित है। ऊंची ध्वजा खूब फहरा रही है, देखते ही जय जयकार शब्द चतुर्दिग् फूट रहे हैं।

८. माता की सप्रभाव मूरति स्पर्श करते ही सभी पाप दूर हो गये। अमृत रस परिपूर्ण नेत्रों की दृष्टि पड़ते ही भरपूर आनंद छा गया।

९. मेघ को देखते ही जैसे मोर हर्षित होता है वैसे ही दर्शनों से आनंद प्राप्त हुआ। चन्द्रमा को देखकर चकोर सुखी होता है वैसा अ-विघटित सुख मिलता है।

१०-११. हंस के मन में जैसे मानसरोवर का नीर बसता है, भौंरे के मन में केतकी और गजराज के मन में नर्मदा का जल प्रवाह वसता है, चातक के मन में मेघ और चकवी के मन जैसे सूर्योदय हैं वैसे ही मेरे मनमें जालपा देवी के चरणों का दर्शन से अधिक स्नेह व्याप्त होता है।

१२. भगवती के दर्शन होने से मेरे मन में हर्ष उत्पन्न होता है। आपके चरण कमल मेरे मन में अहर्निश बसते हैं।

१३. जो नर-नारी रात दिन भगवती की भक्ति भावपूर्वक करते हैं वे संसार में ऋद्धि-सिद्धि सुख संपदा का विलास करेंगे।

१४. हर्षकीर्त्ति कवि कहता है कि जगदंबा के गुण गाते, चरणों की पूजा करते जालपा माई के प्रसाद से उन्हें सुख संप्राप्त होगा।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कवि जयानंद कृत सुशर्मपुरीयनृपति वर्णन छन्द

(नगरकोट-कांगड़ा का इतिहास)

श्री भँवरलाल नाहटा

जालंधर मण्डल—कांगड़ा नगरकोट-त्रिगर्त्त का राज्य वंश अति प्राचीन है। महाभारतकालीन राजा सुशर्मचन्द्र से इस वंश की परम्परा चली आ रही है और वह इसके ५०० नामों में २३४ वें नंबर में है। ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार देवी पार्वती ने ब्रह्मा से वर प्राप्त दैत्यों का नाश करने के लिए चैत्र शुक्ल ८ को अपने पसीने की बूंद से शक्तिशाली मानव की रचना की जो भूमिचन्द्र हुआ। देवगायक पद्मकेतु ने अपनी पुत्री वसुमती को उनसे व्याहा। भूमिचन्द्र ने दैत्यों का वध किया और इसके पुरस्कार में देवी द्वारा त्रिगर्त्त का राज्य उन्हें सम्प्राप्त हुआ। श्री हेमचन्द्राचार्य के अनुसार त्रिगर्त जलंधर का ही पर्याय है। महाभारत और कल्हण कवि की राजतरंगिणी में भी इसका त्रिगत नाम से ही उल्लेख आया है। यों कठौच वंश का मूलस्थान—मुलतान था पर वीर अर्जुन से पराजित होकर सुशर्मचन्द्र ने कांगड़ा-नगरकोट या सुशर्मपुर को बसाया था।

सुकवि जयानन्द कृत "सुशर्मपुर नृपति छंद" अपभ्रंश काव्य में आदि पुरुष भूमिचन्द्र के बीच २-सोनचन्द्र ३-असमर्क ४-अजगर्तचद्र—ये तीन नाम ही आये हैं एवं इसी गुटकाकार प्रति में छंद के शेष होने पर जो सूची दी है, ये ही नाम हैं अर्थात् सुशर्मचन्द्र ५ वें नंबर में हैं। इसी सुशर्मचन्द्र ने काँगड़ा में भगवान आदिनाथ और अम्बिका देवी की स्थापना की, ऐसा जयसागरोपाध्याय कृत विज्ञप्ति-त्रिवेणी और स्तवनादि में उल्लेख पाया जाता है। महाभारत के युद्ध में इन्होंने कौरवों के पक्ष में युद्ध करते हुए स्वर्ग प्राप्त किया। प्रस्तुत नृपति वर्णन छंद के २० वें पद्य में इनके साथ २१८७० रथ, इतने ही हाथी, ६५६०० अश्वारोही, १०९३६० पदाति का आक्षौहिणी सैन्य दल था।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुशर्मचन्द्र के पश्चात् उसका पुत्र ६ सूरशर्म, फिर ७ हरिचंद्र और ८ गुप्तिचन्द्र नरेश्वर हुए। छंद के बाद की सूची में इन दोनों के स्थान में केवल देशलचंद का नाम है। फिर ९ ईशानचन्द्र १० वजड़चन्द्र ११ वें नाहड़चन्द्र[1] हुए। ये जिनेश्वर के धर्म में लवलीन और शूरवीर थे। इन्होंने साचोर में श्री महावीर स्वामी और तन्निकटवर्त्ती नगर-नगर में कूप-सरोवर-वापी और सुन्दर भवनों का निर्माण कराया। ये बड़े यशस्वी, दानी और क्षमाशील नरेश्वर थे। इन्होंने एकरात्रि में प्रासाद निर्मित कराके भगवान ऋषभदेव और अम्बिका देवी को कांगड़ा दुर्ग में तीर्थ की स्थापना करके—विकसित करके स्वर्ग प्राप्त किया था। इनका पुत्र १२ अश्वत्थामा नरेश्वर भी बड़ा वीर था। उसने रणक्षेत्र में गौड़ देशाधिपति को पराजित कर उसकी सुन्दर पुत्री लूणादेवी को विवाह करके लाया। गुटके को सूची में नाहड़चन्द्र के पश्चात् ११ द्वितीयचन्द्र का उल्लेख है। अतः अश्वत्थामा में दोनों १२ नंबर में आये हैं। फिर १३ खड्गशाली,

१. विविध तीर्थ कल्प के अनुसार साचोर महावीर स्वामी की प्रतिष्ठा जज्जिगसूरि ने वीर सं० ६०० में की। वहाँ इनके पूर्वज विंझराय का नाम है। जो नगरकोट की वंशावली में कहीं नहीं मिलता। नाहड़ या नागभट मण्डोवर का प्रतिहार राजा था, जिसने २४ उत्तुंग शिखर वाले चैत्य बनवाये। घटियाला के शिलालेख में इसके पिता का नाम नरभट और पुत्र तात उसका यशोवर्द्धन लिखा है जो नगरकोट से भिन्नता का सूचक है। घटियाला के शिलालेख में यशोवर्द्धन के पुत्र चंदुक-सिल्लुक-झोट-भिल्लुक और क्रमशः उसके पुत्र कक्क पत्नी दुर्लभदेवी से उत्पन्न कक्कुक द्वारा सं० ९१८ में मण्डोवर और रोहिंसकूप में कीर्त्तिस्तंभ द्वय बनवाये। यह सिद्धालय धनेश्वरसूरि के गच्छ के गोष्ठियों को अर्पण किया।

प्राकृत तित्थकप्प में नाहड़ के पिता का नाम जितशत्रु लिखा है और वीर सं० ३०० वैशाखी पूर्णिमा को जज्जिगसूरि द्वारा प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख है। वास्तव में नागभट-नाहड़ का चरित्र उलझन पूर्ण है। कई गूर्जर प्रतिहार नागभट-नागावलोक द्वितीय के साथ आम राजा का समीकरण करते हैं और कुछ कन्नोज नरेश यशोवर्मन (६९०-७२० ई०) के साथ, कोई उसके पुत्र और उसके उत्तराधिकारी के साथ तो कोई कन्नौज के आयुधवंशीय इन्द्रायुध आदि नरेश के साथ मिलाते है। अतएव यह स्वतंत्र शोध का विषय है।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ गोरीचंद (गोरचंद) हुआ जो ईशानदेव का भक्त और विरक्त चित्त वाला था। छंद में इसके बाद १५ इन्द्रचन्द्र का नाम है जो सूची में नहीं है। १६ कल्याणचंद्र १७ कुलचंद्र १८ रामचंद्र हुए। ये दोनों नाम भी सूची में नहीं है। इनके पश्चात् १९ आसचंद हुए। सूची में १७ साल्हादचंद का भी नाम इसके बाद है अतः २० वसुधाचन्द्र का नाम दोनों में होने से यहाँ दो क्रमाङ्क में अंतर आता है। उसके बाद सूची में श्रीचंद का नाम है और छंद में नहीं होने से एक संख्या का अन्तर रहता है। वसुधाचंद्र बड़ा बुद्धिशाली और शूरवीर था। वसुधाचन्द्र नरेन्द्र षट् दर्शन भक्त और जिनशाला का निर्मापक था, इसके विल्लदेवी नामक प्रिया थी। पंचपुर[1] के स्वामी वल्ह को जीतकर आदित्य के गृह (मंदिर) से स्वर्णमय छत्र लाकर उसे ज्वालामुखी देवी के उत्तुंग भवन में आरोपित किया। वसुधाचन्द्र के पुत्र का नाम २१ उदयचन्द्र था।

वंशावली के उपर्युक्त राजाओं के सम्बन्ध में अन्य प्रमाणों के अभाव में अधिक प्रकाश नहीं डाला जा सकता। चीनी यात्री हुआनसांग ने उटीटो (Utito) का वर्णन किया है। कनिंघम साहब इसे पौराणिक वंशावली का 'आदिम' (Adima) मानते हैं। छंद में भी पौराणिक वंशावली के सैकड़ों नाम छोड़कर वर्णन किया गया है। यूनानी इतिहासकार टालमी ने सिकंदर की भारत यात्रा के समय नदी तट के राजा की चर्चा की है। कल्हण कृत राजतरंगिणी में तथा हुआनसांग जो सन् ६३५ ई० में जालंधर और त्रिगर्त का उल्लेख किया है। वह जलंधर के राजा के पास दो महीना ठहरा था। उसने जालंधर राज्य की लंबाई १६७ मील (पूर्व-पश्चिम) और चौड़ाई १३३ मील (उत्तर-दक्षिण) लिखी है। अतः उस समय राज्यसीमा पर्याप्त विस्तृत थी।

---

१. यह स्थान चण्डीगढ के निकटवर्त्ती आजकल पंजौर कहलाता है। यहाँ ९वीं-१०वीं शती की जैन प्रतिमाएं खुदाई से प्राप्त हुई है। २०० वर्ष पूर्व यहाँ बावन जिनालय था। बड़गच्छ के कवि मालदेव ने यहाँ चातुर्मास किया था। यहाँ से शिमला के मार्ग में एक मुगलकालीन सातमञ्जिला दर्शनीय बाग है जिसे हरियाणा सरकार ने बहुत ही सुन्दर बना दिया है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

राजतरंगिणी में राजा पृथ्वीचन्द्र का नाम आया है जिसने काश्मीर के शंकरवर्मन (ई० सन् ८८३-९०३) के पास अपने लघु भ्राता भुवनचन्द्र को जामिन रखा था। आगे चलकर इसी राजतरंगिणी में इद्रचंद्र[२] का नाम आता है जिसने (सन् १०३०-४०) काश्मीर के राजा अनंतदेव को अपनी पुत्रियाँ व्याही थी।

ई० सन् १००९ में महमूद गजनी अपार धन राशि के लोभ में विशाल सेना के साथ कांगड़ा की इस दुर्गम भूमि में आया और उसने श्री व्रजेश्वरी देवी के मन्दिर को भूमिसात् करके यहाँ का सारा धन ले गया और अपनी शक्तिशाली सेना को छोड़ गया। उस समय कांगड़ा का राजा जगदीशचन्द्र था जो इस वंश के आदि पुरुष भूमिचन्द्र की ४३६वीं पीढी में था। लगभग ३० वर्ष पश्चात् सन् १०४३ में कटौच राजा ने दिल्ली के तत्कालीन शासक पणंभोज की सहायता से चार मास पर्यन्त युद्ध करके पुनः अधिकार किया। श्री जोनराज की राजतरंगिणी में कई बार सुशर्मपुर के राजा मल्लचंद्र की चर्चा की हैं जिसने अपने शत्रुओं के द्वारा देश से निष्कासित होकर काश्मीर नरेश जर्यसिंह की शरण प्राप्त की थी। यह घटना सन् ११२८ तथा ११४० के बीच की है। फिर शहाबुद्दीन के काश्मीर आक्रमण के समय भयभीत होकर सुशर्मपुर के राजा का अपने किले को छोड़कर देवी की छत्र छाया में चले जाने का उल्लेख किया है।

सन् १०७० के लगभग कटौच राजाओं के इलाके दो भागों में बँट गये। राजा पद्मचन्द्र के लघुभ्राता, पुत्र चन्द्र ने एक अलग राज्य की नींव डाली, जो 'जसवन' आज होशियारपुर जिले में है। महमूद के सचिव उतबी ने तथा फरिश्ता ने इसका नाम 'भीमकोट' उल्लेख किया है। अलबेरुनी के समय इसका नाम नगरकोट ही था।

राजा उदयचंद्र का पुत्र २२ जर्यसिहचन्द्र हुआ जिसका वर्णन छंद की ४३वीं गाथा में है। ४४वें पद्य में उसके पुत्र २३ जयचन्द्र (जयतचंद्र) का

२. कांगड़ा में राजा इन्द्रचंद्र का बनवाया हुआ इन्द्रेश्वर जैन मन्दिर जो ११वीं शती में निर्मित्त है, शिव लिंग स्थापित कर शिवालय बना दिया गया है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उल्लेख रुद्र पद भक्त रूप में किया है किन्तु सूची में २२वाँ नाम 'वल्हण' का लिखा है उसके बाद २३वाँ जयतचंद दोनों में है। पृथ्वीराजरासो के 'कांगुरा युद्ध' प्रकरण में कांगड़ा दुर्ग के विजय की कहानी लिखी है। इसके अनुसार जालंधर देवी ने स्वप्न में राजा पृथ्वीराज को वर देते हुए भोट भान (जो सभवतः तिब्बत का कोई भोट राजा नगरकोट पर अधिकार किये बैठा होगा) को और फिर पलहन को जीतने का आदेश दिया। और उसने वीर रधुवंशी हम्मीर (हाहुली) के द्वारा उन्हें जीता, अस्तु। यहाँ वर्णित राजा पल्हन ही उपर्युक्त सूची में कथित २२ वल्हन होना चाहिए। छंद में उसका वर्णन कर सीधा २२ राजा जर्यासिघचन्द्र के पुत्र २३ जयतचंद्र का ही उल्लेख किया है। यह जयतचंद या जयचंद्र बैजनाथ मन्दिर के लेखानुसार सन् १२०० से १२२० के लगभग हुआ था।

दिल्लीश्वर अनंगपाल की मृत्यु सन् ११५१ ई० (वि० सं० १२०८) में हुई थी। और उसके बाद मदनपाल राजगद्दी पर बैठा था। खरतरगच्छ युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के अनुसार मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी को सं० १२२३ में उसने दिल्ली लाकर चातुर्मास कराया था और उसी वर्ष द्वितीय भाद्रपद कृष्ण १४ को उनका स्वर्गवास हो गया। राजा मदनपाल के सिक्कों का भी वर्णन ठक्कुर फेरू की द्रव्य परीक्षा में आता है। राजा मदनपाल का स्वर्गवास हो जाने पर ही शाकंभरीश्वर महाराज पृथ्वीराज चौहान—जो अनंगपाल का दौहित्र था, को दिल्ली का राज्यासन प्राप्त हुआ। यद्यपि पृथ्वीराज सन् ११७१ (सं० १२२८ वि०) में राजा हो गया था पर सं० १२३९ में श्री जिनपतिसूरिजी और पद्मप्रभ के शास्त्रार्थ समय वह अजमेर में ही था। रासो का पल्हन या नगरकोट राजाओं की सूची का वल्हन पृथ्वीराज का समकालीन था। छंद में भोट राजा की अधीनता या अन्य किसी कारण से उसका नाम न आया हो पर जयतचंद्र के पश्चात् जिसका समय इतिहासकारों ने सन् १२०० से १२२० अनुमान किया है, निश्चित ही उसका उत्तराधिकारी स० १२७३ अर्थात् सन् १२१६ में (२४) महाराजाधिराज पृथ्वीचंद्र विद्यमान था जिसकी सभा में श्री जिनपतिसूरिजी के वृहद् द्वार पधारने और जिनपालोपाध्यायजी द्वारा सभा पण्डित मनोदानंद

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

को शास्त्रार्थ में पराजित करने का विशद वर्णन मिलता है। महाराजा पृथ्वीचन्द्र द्वारा जयपत्र प्राप्त कर मिती ज्येष्ठ बदि १३ को शान्तिनाथ भगवान के जन्म कल्याणकोत्सव पर इस उपलक्ष में वहाँ के श्रावकों द्वारा एक वृहत् जयोत्सव मनाया गया था। विशेष जानने के लिए देखिए युग प्रधानाचार्यगुर्वावली।

सन् १८७२-७३ में आर्कियोलोजिकल सर्वेरिपोर्ट V के पेज १५२ में नगरकोट कांगड़ा के शासकों की सूची प्रकाशित हुई है जो हमें श्री रामवल्लभ सोमानी ने तथा जे० हचीसन (Hatchison) की हिस्ट्री आफ दी पंजाब हिल स्टेट्स Voe I से महाराज कुमार डा० रघुवीरसिंहजी ने एक सूची भेजी है जिसमें भी कनिंघम साहब का ही अनुधावन है। वास्तव में सभी ने महाराजा पृथ्वीचन्द्र से कांगड़ा के इतिहास को क्रमबद्ध किया है किन्तु इसके समय निर्धारण में ही भूल है। इतिहासकारों ने पृथ्वीचन्द्र का राज्य काल सन् १३३०-१३४५ ई० लिखा है जबकि हमें उपर्युक्त खरतरगच्छ युग-प्रधानाचार्य गुर्वावली सन् १२१६ में उनको महाराजाधिराज के रूप में मान्य करने को डंके की चोट बाध्य करती है। कनिंघम साहब की इस भ्रान्ति ने सारे इतिहास को असंबद्ध व स्खलनापूर्ण बना दिया है। उन्होंने अपनी कल्पना सृष्टि से सन् १४८० तक १५५० वर्षों में प्रत्येक का राज्यकाल १५ वर्ष में बाँट कर १० राजाओं को खपा दिया है, जिसके लिए कोई आधार नहीं है। इन सबको इतिहास की कसौटी पर कस कर सही समय निर्धारित करना ऐतिहासज्ञों का काम है। हम यहाँ कवि जयानंद कृत छंद के आधार पर आगे विचार करते हैं।

नृपति वर्णन छंद के पद्याङ्क ४५ में लिखा है कि राजा पृथ्वीचन्द्र पहले कृष्णोपासक था, फिर उसने जैन धर्म का तत्वबोध पा कर शैव धर्म का त्याग कर दिया। उसने विष्णु भगवान का श्रेष्ठ उत्तुंग भवन निर्माण कराया और श्री कृष्णजी की मूर्त्तियाँ विराजमान की थी। अपूर्वचन्द्र ने भी वैसी ही उदारता दिखलाई थी। खरतरगच्छ गुर्वावली से मालूम होता है कि सं० १२७१ में श्री जिनपतिसूरिजी वृहद् द्वार पधारे और राणा आसराज आदि के

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

साथ ठाकुर विजयसिंह सामने आये और विस्तार पूर्वक उद्यापन, नन्दी रचनादि करके उत्सव को सफल बनाया। इसके बाद आचार्य महाराज अपनी शिष्य मण्डली के साथ तीन चार वर्ष तक उस प्रदेश में विचरे थे तथा सं० १२७३ में महाराजा पृथ्वीचन्द्र की सभा में पं० मनोदानंद के साथ शास्त्रार्थ विजय करने का उल्ले ऊपर किया जा चुका है। सं० १२७४ में वहाँ से वापस पधार कर राणा आसराज के गाँव दारिद्रेरक में चातुर्मास किया था। इन वर्षों में सूरिजी ने राजा को प्रतिबोध देकर पक्का जैन तो बनाया ही, साथ ही साथ राणा और ठाकुर लोगों को भी जैन धर्म में दीक्षित किया मालूम देता है। ये लोग जागीरदार एवं उच्च राज्याधिकारी थे, ठाकुर उनकी पदवी थी। सूरिजी के पट्टधर श्री जिनेश्वरसूरि एवं अन्य शिष्य वर्ग वहाँ विचरण करता रहा है "वीरतिलक चौपई" में नगरकोट के वीर सोनार के श्री जिनेश्वरसूरि द्वारा प्रतिबोध पाने और अनसन आराधना पूर्वक स्वर्गगति पा कर "वीरतिलक वीर" होने को विवरण मिलता है।

महाराज पृथ्वीचन्द्र के पुत्र (२५) अपूवचन्द्र का पुत्र (२६) महाराजा रूप चन्द्र बड़ा शूरवीर दानी और षट्दर्शनी विद्वानों की पूजा करने वाला विचक्षण पुरुष था। उसने अपने नगर में श्री महावीर स्वामी की स्वर्णमय प्रतिमा विराजमान की और रूपेश्वर मन्दिर के निर्माण में प्रचुर अर्थ व्यय किया था। जयसागरोपाध्याय ने भी स्वर्णमय महावीर बिम्ब वाले जिनालय का वर्णन किया है। सं० १४८८ की चैत्य परिपाटी में भी 'सोवनवसही' लिखा है और सं० १४९७ की चैत्य परिपाटी में इसे 'राय विहार' लिखते हुए रूपचंद राजा कारित स्वर्णमय बिम्ब वाला लिखा है। अभयधर्म कृत नगर-कोट वीनती में भी सोवन वसइ में स्वर्णमय महावीर स्वामी के जिनालय को राजा रूपचंद स्थापित लिखा है। जब कि सं० १६३४ में कवि कनक-सोम लिखते है कि राजा रूपचंद ने गुरु महाराज से शत्रुंजय माहात्म्य सुन कर दर्शन किये बिना अन्न ग्रहण न करने का अभिग्रह लिया और गुरु महाराज के ध्यान बल से अम्बिका के प्रगट होकर एक रात्रि में मन्दिर निर्माण कर धवलगिरि से प्रतिमा ला कर विराजमान कर तीर्थ स्थापना करने का

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उल्लेख किया है जो कि सं० १४९७ की चैत्य परिपाटी में राजा सुशर्म द्वारा हिमगिरि से प्रतिमा लाने व एक रात्रि में मन्दिर निर्माण करने की बात स्मृति दोष से रूपचन्द्र महाराजा के लिए लिखी गई प्रतीत होती है। सारे राजा लोग उसके पायनामी थे वह ज्वालामुखी का ध्यान करता था। सारे जालंधर मण्डल में कीर्ति फैलाकर राजा रूपचंद्र स्वर्गवासी हुआ।

इतिहासकारों ने मति कल्पना से प्रत्येक राजा का राज्यकाल १५ वर्ष मानते हुए भ्रान्त परम्परा चला कर राजा रूपचंद्र की राज्यारोहण तिथि १३६० A. D. लिखा है और उसे फिरोज तुगलक के समकालीन माना है। किन्तु छंद के अनुसार राजा रूपचंद की पांचवीं पीढ़ी में हुए महाराजा संसारचंद्र (प्रथम) के समय की वह घटना है। राजा रूपचंद्र के पश्चात् उसका पुत्र (२७) सिंगारचंद्र सिंहासनारूढ़ हुआ। कनिंघम और हचीसन ने इसका भ्रान्त राज्यकाल सन् १३७५-९० लिखा है। वह शिवध्यानरत और शूरवीर शत्रु विजेता था। सिंगारचद का पुत्र (२८) राजा मेघचद्र विप्र भक्त शत्रु सेना का क्षय करने वाला, म्लेच्छों के लिए भयकारी, दान-वीर और शंकर का पूजक था। नृपति वर्णन छंद के बाद को सूची में (२६) रूपचंद के पश्चात् (२७) त्रैलोक्यचंद (२८) सिंगारचन्द्र और (२९) अवतारचंद लिखा है। छंद में त्रैलोक्यचन्द्र और अवतारचन्द्र का उल्लेख नहीं है। सूची के अनुसार मेघचंद्र क्रमांक ३० में आ जाते हैं।

राजा मेघचन्द्र का पुत्र कर्मचंद अपनी कुलदेवी अम्बिका स्वामिनी का ध्याता और विशाल शत्रुसेना से भी अक्षुब्ध शूरवीर था। यह सुन्दर तेजश्वी बुद्धिशाली, दानी, कलाप्रेमी और रानी उदारदेवी का कान्त था। कनिंघम ने दोनों का राज्यारोहण सन् १४०५ और १४२० बतलाया है और हचीसन की शासक सूची में कर्मचन्द्र के पूर्व उसके ज्येष्ठ भ्राता हरीचंद (प्रथम) का नाम राज्य काल १४०५-१४१५ ई० एवं कर्मचन्द्र का सन् १४१५ से सन् १४३० उल्लेख किया है पर छंद में इसका कोई नामोल्लेख तक नहीं हैं और न सूची में ही नाम है।

श्री करमचंद्र का पुत्र राजा संसारचंद बड़ा प्रतापी हुआ (छंद ५७) म्लेच्छ नरेन्द्र पिरोजशाह ने सैन्य दल के साथ आकर कांगड़ा दुर्ग को घेर

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

लिया। संसारचन्द्र ने उसे युद्ध में बुरी तरह हरा दिया। उसने घोड़े आदि भेंट कर संन्धि कर ली और प्रेम सम्पादन कर रातोरात कांगड़ा देश छोड़ कर चला गया। पिरोज का पुत्र मुहम्मद शाह संग्राम से भग कर दिन रात चल कर संसारचन्द्र के शरणागत हुआ। राजा ने उसे संरक्षण देकर पैत्रिक कीर्त्ति को रक्षा की। प्रयाग त्रिवेणी संगम पर माघ स्नान किया, वाराणसी में विश्वनाथ धाम स्पर्श कर पाप मल धोया। गयाजी में पिण्डदान कर बुद्ध भगवान को नमस्कार किया (छंद ६२ तक)।

छंद में संसारचन्द (प्रथम) का पिरोजशाह के समकालीन होना सिद्ध है जब कि इतिहासकारों ने उस समय (सन् १३६० राज्यरोहण तिथि) को रूपचन्द के साथ जोड़ दिया है और संसारचन्द्र का समय सन् १४३५ राज्यारोहण काल लिखा है, किन्तु मुनिभद्र कृत नाहर वीकमसिंह रास के अनुसार उस समय बड़गच्छाचार्य भद्रेश्वरसूरि, भटनेर का राजा दुलचीराय दुलाचन्द था और कांगड़ा में संघ ने महाराजा संसारचन्द से भेंट की है अतः इन तीनों का समय समकालीन प्रमाणित है। आचार्य भद्रेश्वरसूरि का संवत् १४३६ (सन् १३७९) का अभिलेख मिलता है। दुलचीराय से तैमूर ने सन् १३९१ (वि० सं० १४४८) में भटनेर छीन लिया था अतः सं० १४४८ से पूर्व संघ यात्रा का समय निश्चित है क्योंकि संसारचन्द्र ने संघपति को सम्मानित किया था अतः संसारचन्द्र का राज्यकाल स्पष्टतः गलत है। और कनिंघम साहब का इसे मोहम्मद सईद के समकालीन मानना भी भ्रान्ति पूर्ण ठहरता है।

राजा संसारचन्द्र का पुत्र देवंगचन्द्र बड़ा दानी, शूरवीर और सद्गुणी था (छंद ६३ से ६८)।

कवि जयानंद ने तदनन्तर इसके पुत्र नरेन्द्रचन्द्र के वर्णन से पूर्व पद्याङ्क ६७ में अपना नाम दो वार दिया है। इसके बाद पद्याङ्क ७९ अर्थात् शेष तक नरेन्द्रचन्द्र के गुण और नायिका भेदादिक वर्णन है।

महाराज देवंगचन्द्र का नाम अंग्रेजी उच्चारण शैली की कृपा से देवनाग और देव नग्गावंद्र भी उल्लेख हुआ है। राजा नरेन्द्रचन्द्र का समय

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उपयुक्त इतिहासकारों ने सन् १४६५ से १४८० तक माना है जो विक्रम संवत् १५२२ से १५३७ होता है परन्तु जयसागरोपाध्याय संघ सहित वि० सं० १४८४ ज्येष्ठ शुक्ल ५ को नगरकोट यात्रा करने और राजा साहब से साक्षात्कार करने का विशद वर्णन 'विज्ञप्ति त्रिवेणी' और चैत्य परिपाटी स्तवनादि में अकाट्य रूप से पाया जाता है अतः इतिहासकारों की सारी कल्पनाएँ मिथ्या प्रमाणित हो जाती हैं। राजा नरेन्द्रचन्द्र ने उपाध्यायजी को संघ सहित स्वागत पूर्वक अपने महल में बुलाया, उपदेश सुना, अपने पूर्वजों के समय से स्थापित अपने महलों में आदिनाथ प्रतिमा व देवागार स्थित रत्नमय जिन बिम्बों के दर्शन कराये। काश्मीरी पण्डित से शास्त्रार्थ भी हुआ—इन सब बातों को जानने के लिए विज्ञप्ति-त्रिवेणी ग्रन्थ देखना चाहिए।

राजा नरेन्द्रचन्द्र के पश्चात् कांगड़ा की राज वंशावली जानने के लिए हमारे पास इतिहास ग्रन्थों के भ्रान्त समय वाली परम्परा के अतिरिक्त उन्हें परीक्षार्थ कसौटी स्वरूप शिलालेख, यात्रा विवरण, ग्रन्थ प्रशस्ति आदि साधनों की अनुपलब्धि में यथावत् लिखा जा रहा है। राजा नरेन्द्रचन्द्र और इतिहासकारों के समय में लगभग १०० वर्ष का अन्तर चला आ रहा है।

राजा	कनिंघम	हचीसन	
सुवीरचन्द्र	सन् १४८० ई०	१४८० ई०	
प्रयागचन्द्र	×	१४९०	छन्द के परिशिष्ट में सूची में भी नाम नहीं है
रामचन्द्र	१५१०	१५१०	
धरमचन्द्र	१५२८	१५२८	सन् १५५६ में अकबर ने कांगड़ा जीतकर अपने अधीन कर लिया
माणिक्यचन्द्र	१५६३	१५६३	
जयचन्द्र	१५७०	१५७०	कवि कनकसोम ने सं० १६३४ (ई० सन् १५७७ में यात्रा की अतः सन् १५७० राज्यारोहण असंभव नहीं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विधीचंद	१५८५	१५८५	
त्रिलोकचन्द्र	१६१०	१६०५	छन्द के परिशिष्ट के नाम यहाँ शेष। जहाँगीर के विरुद्ध विद्रोह किया।
हरीचंद (द्वितीय)	१६३०	१६१२	
चन्द्रभानचंद	१६५०	१७२७-४९	(निःसन्तान) धरमचंद के लघु भ्राता कल्याणचन्द्र का वंशज था। औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह किया। मानकोट के घेरे में मारा गया।
विजयरामचन्द्र	१६७०	१६६०-८७	
उदयरामचन्द्र		१६८७	विजयरामचन्द्र का भाई था।
भीमचंद	१६८७	१६९०	
आलमचंद	१६९७	१६९७	
हमीरचन्द्र	१७००		
अभयचन्द्र	१७४७	१७४७	(निःसन्तान)
गमीरचन्द		१७५०	यह हमीरचंद का छोटा भाई था।
घमण्डचंद	१७६१	१७५१	यह गमीरचंद के लघु भ्राता पुत्र था।
तेगचंद	१७७३	१७७४	
संसारचंद (द्वितीय)	१७७५	१७७६	सन् १७८५ में कांगड़ा किला पाया, सन् १८२४ में मृत्यु हुई
अनिरुद्धचन्द	१८२३		चार वर्ष बाद राज्य छोड़कर हरिद्वार चला गया।
रणवीर	१८२९	१८३२-४७	सन् १८४५ में सिक्ख युद्ध के समय कांगड़ा अंग्रेजों ने ले लिया पर किले पर बाद में अधिकार हुआ।
मुरुतचन्द्र			

Jain Educational International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

हमारे संग्रहस्थ गुटके में श्री सुशर्म्म नृपति वर्णन छंद (गा-७९) के बाद दी हुई सूची—

१ भूमिचन्द्र	११ द्वितीयचंद	२१ जयसिंह	३१ कर्मचन्द्र
२ सोमचन्द्र	१२ अश्वस्थाम	२२ वल्हण	३२ संसारचन्द्र
३ असमकर्क	१३ खड्गशालि	२३ जयत्	३३ देवांगचन्द्र
४ अजगर्त	१४ गोरचंद	२४ पृथ्वीचन्द्र	३४ नरेन्द्रचन्द्र
५ सुसर्म	१५ कल्याणचन्द्र	२५ अपूर्वचन्द	३५ सुवीरचन्द्र
६ सूर्यसर्म	१६ आसचन्द	२६ रूपचंद्र	३६ रामचन्द्र
७ देशलचन्द	१७ साल्हादचन्द	२७ त्रैलोक्यचन्द्र	३७ धर्मचन्द्र
८ ईशानचन्द्र	१८ वसुधाचन्द्र	२८ सिंगारचन्द्र	३८ जयचंद्र
९ वजड़चंद	१९ श्रीचन्द्र	२९ अवतारचन्द्र	३९ विधीचन्द्र
१० नाहड़चन्द	२० उदयचन्द्र	३० मेघचन्द्र	४० त्रिलोकचंद्र

त्वंदेव त्रिदशेश्वरार्च्चितपदस्त्वं विश्वनेत्रोत्सवः
त्वं लोकत्रय तारणैकचतुरः त्वं कामदर्प्पापहः
त्वं कालत्रय जीव भाव कथकः त्वं केवलो द्योतकः
त्वं कर्म्मारि विनाशनो प्रतिभटः त्वां नो गति सन्मतिः ॥१

नगरकोट-कांगड़ा की जालंधरी मुद्राएँ

काँगड़ा के पहाड़ी राज्य पर महाभारत काल से लगभग अंग्रेजी शासन होने तक राजा सुशर्म के वंशजों ने चिरकाल शासन किया था। उनके पास अपार स्वर्ण रजत और रत्नों का भण्डार था जिसे अत्याचारी यवनों ने जी भर कर लूटा जिसका लेखा जोखा करना गणित से बाहर का विषय है। कांगड़ा की अपनी एक टकसाल थी और राज्य में तत्कालीन राजाओं के सिक्के चलते थे। सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के मंत्रिमण्डल में विविध विभागों के अधिकारी रहकर चन्द्राङ्गज परम जैन ठक्कुर फेरू नामक धांधिया श्रीमाल श्रावक ने विविध वैज्ञानिक विषयों के ७ ग्रन्थों की रचना की थी जिनमें सं० १३७५ वि० में दिल्ली टंकशाल में कार्य स्थित रहकर द्रव्य परीक्षा नामक महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना की थी जिसकी गाथा १०९-११०

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

में उस समय प्राप्त जालंधरी मुद्राओं का वर्णन किया है। उस समय जो भी प्रचलित मुद्राएँ नाणाक्ट परिवर्त्तनार्थ दिल्ली में आतो थो उनका वर्णन निम्नोक्त गाथाओं में है।

जालंधरी वडोहिय जइतचंदाहे य रूपचंदाहे
रुप्प चउ तिन्नि मासा दिवढसयं दुसय टंकिक्के ॥१०९॥

अर्थात्—जालंधरी वडोहिय मुद्राएँ 'जइतचंदाहे' और 'रूपचंदाहे' हैं। जइतचंदा हे मुद्रा में प्रतिशत चार मासा चाँदी है और १५० के भाव है। रुपचंदाहे मुद्रा में तीन मासा चाँदी है और टंके की दो सौ का भाव है।

तिन्नि सय इक्किटंके सीसड़िया हुइ तिलोयचंदाहे।
संतिउरी साहे पुण चारिसया इक्कि टंकेण ॥११०॥

अर्थात्—सीसड़िया मुद्रा तिलोकचन्दाहे का भाव टंके की तीनसौ का है तथा सांतिउरीसाहे मुद्रा का भाव चारसौ का मूल्य एक टंका है।

प्र० १५० जइतचंदाहे	१००	मध्ये	रूपा	तोला	मासा	४
प्र० २०० रूपचंदाहे	१००	,,	,,	तो०	मासा	३
प्र० ३०० त्रिलोकचंदाहे	१००	,,	,,	,,	,,	३
प्र० ४०० सांतिउरी साहे	,,	मध्ये	,,	,,	,,	३

यहाँ बडोहिय और सीसड़िया जालंधरी मुद्राओं का वर्णन आया है। इससे राजा जइतचन्द रूपचंद और त्रिलोकचंद का शासन काल सं० १३७५ (ग्रन्थ रचना) से पूर्व का निश्चित है ही। सांतिउरी साहे चौथी मुद्रा (सीसड़िया) किसी सांतिपुर नगर की टकसाल के सम्बन्धित मालूम देती है अन्वेषणीय है।

यह ग्रन्थ सं० १४०३ की हस्तलिखित प्रति से मूलरूप से सभी ग्रन्थों को जोधपुर से तथा मेरे द्रव्य परीक्षा का सानुवाद प्रकाशन वैशाली प्राकृत और जनोलोजी संस्था से हुआ है।

इस प्रमाण से भी पाश्चात्य विद्वानों की शोध काल्पनिक प्रमाणित होती है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जयानंद कवि रचित

सुसर्मपुरीय नृपति वर्णन छंद

भद्दं मंगल्ल सद्दं वियरओ सययं भारई दिव्व भावा,
पुत्थी संलग्न हत्था कल कमल मुही हंसजाणासणत्था।
पंडिच्चाणरहि माया सरस कविकला पंडियाणं नराणां,
गगा पाणीव सुद्धा विबुह जण सया थुव्वमाणा सयावि ।।१।।

दित्ता दित्तप्पचार क्खय करण विही सावहाणो सुरंगं,
सव्वंगं लच्छिदेवी घण सिहण महा संग सोहग्ग रूवो।
सेवा लग्गाण मग्गं विमल जयवरं णाम विक्खाइ सारं,
वीरो सारंगपाणी दिसउ भव सुहं सव्व सत्ताण णिच्चं ।।२।।

जा देविंद नरिंद वंदिय पया मायूर दित्तपहा,
विस्साणंद विवद्धणी सुर रिउ ब्भावत्थ वित्थारिणी।
पूया लग्न समत्थ माणव मणोभिप्पाय संपूरणी,
सा पूरेउ सुहाण वंछिय फलं ज्वालामुही देवया ।।३।।

सिंदूरारुण कुंभ विब्भम जुओ उद्दंड चंडप्पहा,
सुंडादंड करोय तुंडवलयं वित्थार भावुज्जलं।
सुद्धगीय विणोय चिब्भम कलो विज्जाहरी सेविउ,
णिच्चं संठिय रेउ ईस-गिरिजा पुत्तो गणेसो जयं ।।४।।

देविंदामर विंदवंदिय पओ मुत्तिगणा भूसणो,
उत्ता उत्त विचार सार चउरो धमथ वित्थारणो।
हिंसाकम्म विवज्जिओय पढमो तित्थंकरोशंकरी,
तुम्हाणं वियरेउ वंछिय सुहं आईसरो भासुरो ।।५।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबा अंबय लुंबि संगयकरा गंधव्व गीयक्कमा,
पुत्तालंकिय वाम अंक विसया सिंगार संभूसिया।
तुम्हाणं नर नाह पंचवयणा रूढा दिढ विक्कमे,
देवी दक्खिण हत्थ लग्न तणया विग्घक्खयं कुव्वओ ॥६॥

अद्धंगे गिरिजा विभाइ सययं सव्वंग संभूसिया,
भाले जस्सवि लोयणो अणुदिणं अग्गीमओ भासए।
कंठे पन्नग सामिओ मणि विभालंकार हारोवमो,
रुद्दोरुद्द भयाउ रक्खउ जगद्देवो मही वल्लह ॥७॥

संखंके कमलासण ट्ठिय परो कारुण्ण पुणालओ,
गंधव्वा सुर जक्ख किन्नर वहू संथव्वमाणा सया।
राजावट्टय वण्ण वण्णिय रुई कंदप्प दप्पा पहो,
खित्ताधीसवरो करेउ कऊलू तुम्हाण दुक्ख खयं ॥८॥

सत्तुस्सोणिय नेय नासिय तमो चक्कप्पम्मोए रओ,
नीरुप्पण्ण विकासणो ससिकला संवद्धणे तप्परो।
लोया जीवण मेहराय जणओ तिव्वप्पया बालओ,
आइच्चो तुयरज्ज संपइ विहिं पूरेउ संसच्चहा ॥९॥

मच्छ कुम्म वराहु अवरु नरसीहु सुव्वामणु,
रिउ विद्दावण परसुराम राघव णारायणु।
बुद्ध कलंकि उदिव्य रुई दीसहिं जहिं जहिं सुंदर,
तारा तोतल देवि पमुह दीसहिं गुण मंदिर।
ए सव्व देव देवी सहिय कंगड़ गढ दीसहि अमल,
सुसरम्मिराय निय सत्त गुणि तियतेसरि थप्पिय सयल ॥१०॥

कंगड दुग्गाहिवयं नरिंदचंदं निवं प्पमोएण।
कवयामि कव्व कुसलं मुक्खो विहु सुपय बंधेण ॥११॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नमिऊण भाव जुत्तं निय गुरु पय पंकयं हि भत्तीए।
तियलेसर सयाणं कुल वित्थारं भणिस्सामि ॥१२॥

वंशावली

पुव्वि राओ भूमिचंदो[1] नरिंदो, देवीजाओ जाणु सग्गे सुरिंदो।
उक्किट्ठाणं दाणवाणं कयंदो, मिदुप्पन्नो सव्व सुक्खाण कंदो ॥१३॥

सग्गं पत्ते भूमिचदे महिंदे, पट्टो विट्ठो सोहए सोमचंदो[2]।
रज्जं किच्चा सत्तुवग्गं समग्गं जित्तो मुत्ति खित्तं पवित्तं ॥१४॥

भूमि सक्क असमक्क[3] नरेसर, दाणि वीरु रणि धीरु कलायर।
सोमचंद नंदण दुह भंजण, सरणाइय रक्खण सुवियक्खण ॥१५॥

तयणु अजगत्त[4] चाएसरो भत्तउ,
सरल सुकवित्त तत्तुत्थि अणुरत्तउ।
सवल रिउ सत्थ वित्थार खय कारणो,
सुकय कम्मेहिं निय रज्ज वित्थारणो ॥१६॥

तणु अजगत्तचंदस्स सुपसिद्धओ,
सुहड़ सयलक्ख परिवार संवद्धओ।
विमल मय जुत्त सुसरम[5] रवो सरो,
मयण समरूवि महि खंड मंडणसुरो ॥१७॥

सबल दल मेलि कुरुखित्ति संपत्तओ,
अइ कुडिल कोवरस भावि संदित्तओ।
विषम रण केलि लीलाइ संभूसिओ,
विविह भड़ सद्दि रुद्दोवि संहासओ ॥१८॥

समर वर रंगि भट्टेण संवुत्तओ,
विमल कुरुखित्ति पत्थेण संजुत्तओ।
भिड़िवि बहु भंगि संगंमि संपत्तओ,
विविह ललना विलसिहिं संरत्तओ ॥१९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

रथह सहस इकवीस अट्ठसय सत्तर निम्मल।
तित्तिय गय गुड़ियंति सुहड़ सनद्ध भुय वल।।
पंचसट्ठि असवार सहस छिय सयय दहुत्तरइ।
इक्क लक्ख नव सहस तिन्निसय सट्ट वीर वर।।
असि फारस फर फरकंत कर (अ) क्षोहिणिदल मेलि करि।
सुसरम्मराउ अजुण सिउ समरंगणि झुज्झउ सुपरि।।२०।।

सुसरम्मचंद पुत्तो सूरशर्म्मो[१] थुणिज्जए भवणे।
संगम सुरय संगम कलिओ तियतेसरो राओ।।२१।।

तयणु हरियंद[२] राओ हरिचंद नरेसरुव्व सत्रु रओ।
महि मंडलि विक्खाओ वियरण कम्ममि सतुरओ।।२२।।

हरियंद राय तणओ विक्कम विऊलोइ गुत्तिचंद निवो।
सिरि सोमगुत्तिचंदो चंदुव्व जणं पमोयंतो।।२३।।

ईसाणचंद भूवो रूवेण पराजिओय लच्छि सुओ।
वजड़चंद महीसो सुपसिद्धो निय गुणेहिं सया।।२४।।

वजड़चन्दस्स छओ नाहड़चन्दो महिज्जए भुवणे।
धम्म धुरा उद्धरणो क्खय करणो मिच्छ सिण्णाणं।।२५।।

सोमवंसि नाहड़ घर सामिउं,
अंबिक माया पूरिय कामिउं।
मिच्छ मीर मारण जम सरिसउ,
रज्ज करइ निय देसिहि हरसिउ।।२६।।

सच्चउरिहिं पासइ मणोहरि,
वीरनाहु दिणयरु तम खयकरु।
नयरि नयरि वर कूव सरोवरु,
वावि भवण दीसहिं अइ सुंदर।।२७।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिणवर धम्मि मग्गि संलीणउ
जसु जसु देसिहि भमइ ऊडीणउं ।
दाणि पुंणि संथुण्ण खमावरु
नाहड़चंद चंद जिम सुइयरु ॥२८॥

एक रयणि पासाउ निपाइवि
रिसहुनाहु अंबिक ओहि ठाइवि ।
कंगडु दूग्गि तित्थ रएविणु
सग्गिपत्तु नाहड़ विहसेविणु ॥२९॥

नाहड़चंद नरिंदस्स नंदणो सत्रु विंद खय करणो
असमत्थामा नरवइ रस विंदी सव्व कत्थाणं ॥३०॥

असमत्थामा नरवइ वरो गोडनाहस्स दप्पं भंजित्ता
जं विषम समरे पि त्ति मग्गं सरित्तु ।
लूणादेवी कमल वयणा तस्स पूआल रत्ता
वीवाहित्ता नियपुरवरं दित्त तेऊं समीए ॥३१॥

तयणु नरवरिंदो खग्गसाली विलासी
वसुह रमणि भावा णंहि दालिद्द नासी ।
विबुह कविवराणां नीइ कम्मेहि युत्तो
सयल सुरवराणं जेम इन्दो महिंदो ॥३२॥

गोरी मयंको तणयंग जम्मा वसुन्धरा भोगरओ अणिच्चं ।
ईसाण देवस्स पएसु भत्तो विरत्त चित्तो भववास मग्गे ॥३३॥

गोरी मयंकस्स तणुप्पसूओ इंदाभिहाणो नरनाह राओ ।
सुरिंद वग्गाण सुहंकरो जो किच्चा खयं दाणव णायकाणं ॥३४॥

इंदचंद तणओ भव भत्तो
सुद्ध धम्म करणे अणुरत्तो ।
दाण माण करि रंजिय चित्तो
सत्रु भग्गि परिपोसिय मित्तो ॥३५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्लाणचंदो कमला निवासो
कल्लाण सोहा तनु वण्ण भासो।
कल्लाण रंगेसु वि गीयमाणो
जाओ सुसम्मस्स कुले पहाणो ॥३६॥

कल्लाणचंदस्य तणु प्पसूओ
पयाव जुत्तो कुलचंद राओ।
परोवयार करणे समत्थो
जालामुही झाण रओ महत्थो ॥३७॥

समर रसि समिद्धो बुद्धि रिद्धि प्पसिद्धा
गुण गण वर गेहो रूव सोहा सुरेहो।
जिउ रिउ वल चक्को पुण्ण कम्मे अथक्को
विजय कलिय चक्को रामचंदो सुभक्को ॥३८॥

आसचंद्रो तस्स जाओ अमेओ
विसक्खाओ सत्रु लोए अजेओ।
दाणे कण्णो अण्णन्नारी विवण्णो
धम्मे पुण्णो जाण पुंणेहि पुण्णो ॥३९॥

छिय दरसण भतो सुद्धकम्मेसु सत्तो
विरचिय जिणसालो भत्त सत्ताण रत्तो।
रुचिर मइ विसालो सत्रु वग्गेकयंदो
वसुहससि नरिंदो विल्ल देवीय कंतो ॥४०॥

वल्हो पंचपुराहिवस्स विजयं किच्चा पयावाहिओ
आइच्चस्स गिहाऊ आणिवि महा छत्तं सुवण्णं जलं।
देवी जालमुही सु तुंग भवणे आरोविओ णिच्चलं
जेणाणंद मएण भाव जससो विद्धि हि कुज्जा थिरं ॥४१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सिरिगिहो वसुहा ललनाधवो
वसुहचंद सुओ गुण मन्दिरो।
उदयचंद निवो तसु संभवो
परम जालमुही कय संभवो ॥४२॥

तयणु जयसोहचंदो वियलिय सत्रो निय प्पयावेण।
कमला केलि निवासो (सविलासो) विविह भावेहिं ॥४३॥

रुद्द पय भत्तओ सयलरिउ दारुणो
वित्तुप्पण दाण वखाणय वित्थारणो।
मित्तु जण वल्लि वण गहण मेहारवो
जयसिह निव संभवो जयचंद धर सामिओ ॥४४॥

कण्ह पय भत्त मइ विउल पित्थी ससी
कित्ति कुमुअस्स वियसण पहेणं ससी।
चत्रु सिव दव्व जिणधम्म पह जाणणो
राउ पित्थी हिम करण कुलवद्धणो ॥४५॥

विण्हु सुर राय वर रमण निम्मापणो
धार गिरि कम्म करणेसु मइ सासणो।
पुण करणीय णिय दव्व विक्कय करो
नरवरिंदोअ पित्थी मयंको वरो ॥४६॥

वाम करि पासि सिरि रमणि संसोहिओ
पिषि पहु पुट्ठि सुर विट्ठि आसण ट्ठिओ।
उच्च भुवणंमि जिण महुरिओ ठाविओ
दव्वय किच्चु सिरि अउव्वसिसिरायणा ॥४७॥

पित्थी सस्सिस्स त्तणओ अउव्वचंदो निवो सुसम्मचंदे कुले।
तस्स सुवो रूवससी विक्खाओ वसुह मज्झंमि ॥४८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

रूवइन्द रिउ दप्प विहंडणु
दुत्थिय दीणह दालिद्दह खंडणु।
पंडिय लोयह बुद्धि विवद्धणु
छिह दरिसण पूयणि सुवियक्खणु ।।४९।।

सोवन मउ सिरि वीर जिणेसर
काराविउ अणइ रूवेसरु।
अत्थव्वय निय कित्ति रहाविय
पुण्णविद्धि निय नयरिहि ठाविअ ।।५०।।

सव्व राय जसु चरण नमंसहि
कित्ति पूर कवियण सुपसंसहिं।
जालमुही ज्झाणिहि अइ लीणउं
तसु पसाइं रिद्धिहि अक्खीणउं ।।५१।।

जालंधरु सव्वुवि भंजेविणु
निय कित्तिहि विथार रएविणु।
सुद्धज्झाण नारायण सुमिरणि
सग्गि पत्तु इन्दह अद्धासणि ।।५२।।

सिरि रूवचंद नरिंद नंदणु तस्स पट्टि वयठउ।
सिंगारचंदु महिंदु सोहइ रज्ज मग्गि पइठउ ।।
अइ दुट्ठ रिउगण जिणिवि समरिहि विजउ लहिवि पसिद्धओ।
सिव झाणि रत्तउ गुणिहिमत्तउ चित्त निम्मल सिधओ ।।५३।।

तसु अंग संभमु विप्प भत्तउ वैरि सिन्न खयंकरो।
सिरि मेहचंद नरिंद सुरिंद समवडि दुट्ठ मिच्छ भयंकरो ।।
नयरीं हिमगिहिं लोकु पालवि धम्म रं (गि) हि रत्तओ।
सिवपुरीय णाइकु देव संकरु पूयविय रण सत्तओ ।।५४।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नियकुलज[1] सामिणि[1] देवि अंबिक माइ ज्झाण विलगओ।
पर सिन्नु पिखिवि अइ महत्तरु सत्रु लेसि अभगओ॥
सिरि मेहचंद नरिंद संभवु करमचंद नरेसरो।
जसु माणि दाणिहिं चित्तु रंजिउ नित्तु वण्णइं कविवरो॥५५॥
रूवि सुंदरु तेय मंदिरु बुद्धि विक्कम सायरो।
नियसत्त त्तत्ति विचित्त चित्तउ जस्समित्त मणोहरो॥
ऊदारु देवी कंत मणहरु करमचंदु कलायरो।
कंगडह सामिओ देहि कामिओ मग्गहै णाह सुहंकरो॥५६॥
संसारचंद राओ समुल्लसंत त्तप्पयावि विक्खाओ।
सिरि करमचंद पुत्तो सुचरित्तो मणुय जम्मंमि॥५७॥
मिछह नरिंद पेरोजसाहि। दल मेलिहि पत्तउ पातसाहि।
कंगुडउ वेढि करि इम कहेइ। मुझ आगइ हींदू कुण रहेइ॥५८॥
संसारचंदु रणि भिडण लग्गु। साणेसुतिक्ख करि करिहि खग्गु।
मिछह विणासु पोरिसु करेइ। हय हत्थि पत्ति दलु संहरेइ॥५९॥
हय दाणि माणि रंजिवि नरिंदु। विग्रह मय दूसण तोड़ि कंदु।
रंगिहि पणठ पेरोज साहि। तहि देसह हुंतउ रयणि वाहि॥६०॥
पेरोज पुत्तु महमद्द साहि। संगामि णट्ठु दिण रयणि वाहि।
सरणाइओरक्खिउ पातसाहिं। संसारचंदि पित्तिहिं पवाड़ि॥६१॥
वेणी संगमि माधु न्हाइ नियपियर पमोइय।
वाणारसि सिरि विसणाहु फरसिवि मल धोइय (इ)॥
गया सुर तित्थिहिं पिंड देइ पुव्वज सवि रंजिय।
बुद्धु नमंसिवि पाव सयल निय देहहु रंजिय॥
तियतेसर रायह सत्तगुणि तीरथ पणमिय भाउ धरि।
संसारचंदि पुण हसिय वित्थारिय निय कित्ति सिरि॥६२॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

देवंगचंग (?द) राओ तियतेसर सव्व राय सिरि मउडो।
संसारचंद्दत्तु अवइ तणओ सव्वंग भाव जुउ ॥६३॥

रस भोग जुत्तो चरिते पवित्तो महाणंद संपूरिओ रंग सत्तो।
कला केलि वासो कल जोग रत्तो सिवा पायभत्तो सुसत्ते सुचित्तो ॥६४॥

सारंगो सुचंगो धरा भोय दित्तो। सुरत्तो सुचित्तो रणारंभ मत्तो।
विरत्तो कुकम्मेसुदाणिक्क वीरो। मही अप्पणे सावहाणो सुधीरो ॥६५॥

रिउव्वाय कालो कविते रसालो। मईहिं विसालो विवेए हुसालो।
अई पूय संपूरियउं मित्तवग्गे। रमामंदिरो सुंदरो धम्म मग्गे ॥६६॥

जयाणंद संवासिओ सुद्ध भावो। हयदाणि सम्माणियो ओभट्टदेवो।
तियोतेसरो राउ देवंगचंद्रो। जयाणंद संवण्णियो जेम इंदो ॥६७॥

दाणि कण्ण सम सरिसु पत्थि जिम विक्कम सोहइ।
सत्ति जुहिट्ठिल राय जेम देवह मण मोहइ ॥

माणि दुजोहण राय जेम रायहि सेविज्जइ।
चित्त कवित्तिहि भोय जेम कवियण वण्णिज्जइ ॥

देवंगचंद भाविहि सहियउ जाणइ गीय कवितु रस।
संसारचंद नंदण सगुण जसु वण्णणि मणि अइ रहसु ॥६८॥

देवंगचंद तणयं नरिंदचंदं निवं पमोएण।
निय मय वित्थारेणं वण्णण रूवं भणिस्सामि ॥६९॥

संखिणि चित्तणि हत्थिणि पउमिणि नारीय रूव परि कलिया।
रायं नरिंदचंदं निय निय भावेण सेवंति ॥७०॥

संखिणि संखाहरणा मुत्तिय वर हार भूसियाणिच्चं।
विभम विणोअ कलिया नरिंदचंदं निवं पसंसेइ ॥७१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संखिणि वर नारी गुणिहि सुतारी सारी जिम णच्चंति ।
रंगुज्जल वयणी दीहर नयणी करणी गय चल्लंति ।।

रंगिहि मयमत्ती विसयासत्ती भावि सुदित्ती चंग ।
तियतेसरु भावइ तालिहिं गावइ सेवइ अइहि सुरंग ।।७२।।

चित्तिणि चित्ति कमिसुविचित्तिय । रूविअणग्गल कामासत्तिय ।
वीण करवि करि गाइय लुधिय । धम्मि कम्मि णिच्चल सुत्थिय ।।७३।।

चित्तिणि वर कामिणि, तरुणियसामिणि, नमणि करइ बहुभंगि ।
हंस गय चल्लइ, करु धरु सल्लइ कामुअ अंगि ।।

मयरद्धय भुल्लिय, गुण गण पल्लिय मल्लिय जिम सुकुमाल ।
कर कंकण सोहइ, विबुहह मोहइ, वोहइ कामि कराल ।।७४।।

हत्थिणि रमणी कामि गहिल्ली ।
नरिंदचंद सेवण खणि चल्ली ।।

मयरद्धय रसि अइघणु भुल्ली ।
सच्चि कमि छंडिवि इक्कल्ली ।।७५।।

हत्थिणि सुंदरि, रूवह मंदिरि सुमिरिवि हरि मणि झाणि ।
रसि लुद्धिय बाला भाल विसाला माला धरि निय पाणि ।।

जोवण भरि मत्तिय रसि संसत्तिय दित्तिय तेय पवित्त ।
त्तियतेसरु नरवइ नियमणि सुमिरइ रइ रंगिहिं इक चित्ति ।।७६।।

इंदीवरदल दीहरनयणा, वियसिय पउम पफुल्ल सम वयणा ।
पउमिणि रत्तुप्पलु कर चरणा, पउमिणि रमणी धमिहि सघणा ।।७७।।

पउमिणि वर भामिणि मयगल गामिणि सुमरणि जसु भत्तारु ।
अहरुट्ठय रत्तिय भावि सुमत्तिय सुपवित्तिय रय सार ।।

घण पीण पयोहरि भावि मणोहरि दीहररूवि सुचंगि ।
पुण्णहि संपुण्णिय चंपय वयणिय पामिय विभुम रंगि ।।७८।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संखिणि गावइ गीउ राग भाविहि सुमणोहरु।
चित्तिणि चित्ति विचित्ति कव्व भासइ गुण सुंदरु॥

हत्थिणि हत्थह फेरु रइवि तंडवु अइ मंडइं।
पउमिणि पंकज वयणि थयणि कामिय दुह खंडइ॥

च्यारइ सुनारि रंगिहिं कलिय निय गुणरस वित्थारु करि।
सेवहिं नरिंद ससिराय गुरु निय विण्णाण भावु धरि॥७९॥

॥ इतिश्री सुसम्मंपुरीय नृपति वण्णंन छंदांसि समाप्तानि॥ शुभं॥छ॥

हिन्दी भावार्थ—

१. जिसके हाथ में पुस्तक धारण किया हुआ है, कमल जैसे मुख वाली, हंसासन स्थित, दिव्य भावमय सरस्वती निरन्तर कल्याण-मंगल वितरण करती है। पंडितों की वह जननी है और विद्वान पुरुषों को सरस काव्य कला प्रदान करती है। गंगाजल की भाँति पवित्र है सर्वदा सैकड़ों विद्वान लोगों द्वारा स्तुत्यमान है।

२. तेज का प्रसार और अन्धकार क्षय करने में सचेत, तेजस्वी और सर्वांग सुन्दर पीनस्तनी लक्ष्मीदेवी का सम्पर्क सौभाग्य रूप है। सेवकजनों के मार्ग को विमल और विजयी बनाने में जिसका नाम सारभूत ख्याति प्राप्त है वह सारंगपाणि वीर समस्त जीवों को नित्य सांसारिक सुख प्रतिपादित करे।

३. जो देवेन्द्र-नरेन्द्रों से वन्दित चरणों वाली मयूर वाहिनी (?) विश्व में आनंद को बढ़ाने वाली और असुरों के रहस्य को फैला देने वाली है। पूजा में संलग्न समस्त मनुष्यों के मनोरथ पूर्ण करने वाली है, वह ज्वालामुखी देवी वांछित फल-सुखों की पूर्त्ति करे।

४. सिन्दूर रंजित लाल कुम्भस्थल युक्त उद्दण्ड-प्रबल शुण्डादण्ड और मुख वलय द्वारा उज्ज्वल भावों का विस्तार कारी है। शुद्ध गीत विनोद

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विलसित, विद्याधरी सेवित ईश्वर-गौरी का पुत्र गणेश नित्य जय-जय कर से शोभित रहे।

५. देवेन्द्र और देवगणों से पूजित चरणकमल, मुक्ति रूपी नारी के भूषण, युक्ता युक्त रहस्य विचार में चतुर, धर्मार्थ विस्तारक, हिंसाकार्य विवर्जित दीप्तिमान प्रथम तीर्थङ्कर शंकर आदिनाथ आपको वांछित सुख प्रदान करे।

६. आम्र लुंबधारिणी, गन्धर्वों के गीत गान क्रम युक्त, बाँयी गोद में पुत्र से अलंकृत, विशदशृंगार भूषित, सुदृढ़ पराक्रमी, सिंह वाहन पर आरूढ अम्बादेवी जिसके दाहिने हाथ से पुत्र संलग्न है, हे नर नाथ! वह देवी आपकी विघ्न बाधाएँ क्षय करे।

७. सर्वांग विभूषित गिरिजा जिसके अर्द्धांग में निरन्तर सुशोभित है, जिसके ललाट पर रात दिन तीसरा नेत्र अग्निमय प्रतिभासित है, जिसके कण्ठ में शमित साँप मणि जटित हार की भाँति अलंकृत है, हे राजन्! वह जगत का देव रुद्र, रौद्र भयों से रक्षा करे।

८. गन्धर्व, देव, यक्ष, किन्नर-किन्नरी द्वारा सदा संस्तूयमान, कारुण्य पुण्य का निकेतन, कमलासन स्थित शंखधारी, कन्दर्प के दर्प्प को अपहरण करने वाला राजमार्ग में वर्ण्य प्रशंसित कान्ति वाला श्रेष्ठ क्षेत्राधीश कऊलू तुम्हारे दुखों का क्षय करे।

९. शत्रु के रक्त के समान रक्त तेज से अन्धकार नाशक, नभो मण्डल का आह्लादक, किरणों से कमल का विकासक, चन्द्रमा की कला संवर्द्धन में तत्पर, लोकजीवन मेघराजा का जनक, तीव्र प्रतापी हे राजन्! वह बालसूर्य आपकी राज्य-संपदा की सर्वदा वृद्धि करे।

१०. मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, रिपुविद्रावण परशुराम, रामचन्द्र और नारायण बुद्ध और कलंकी (दशावतार) यत्र-तत्र सुन्दर सुरुचिपूर्ण दिखाई पड़ते हैं। तारा, तोतलदेवी आदि गुणों के मन्दिर हैं—इन सब

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

देव-देवियों से युक्त कंगड़गढ निर्मल भासित होता है। त्रिगर्त्तेश्वर सुशर्म राजा ने अपने सत्व गुण से सब को स्थापित किया है।

११. कंगड़ कोट के स्वामी नृपति नरेन्द्रचन्द्र के प्रमोद के हेतु मूर्ख होते हुए भी सुपद्य बन्ध कुशल काव्य कहता हू।

१२. अपने गुरु महाराज के चरण कमलों में भक्ति पूर्वक नमस्कार करके त्रिगर्त्तेश्वर राजाओं का कुल-विस्तार कहूँगा।

१३. पूर्व काल में राजा भूमिचन्द्र नरेन्द्र हुआ, जो देवी से जन्मा हुआ मानो सुरेन्द्र हो हो। उत्कृष्ट दानवों के लिए कृतान्त था। वह चन्द्रोत्पन्न सर्व सुखों का कन्द था।

१४. महाराजा भूमिचन्द्र के स्वर्ग प्राप्त होने पर उसके पट्ट पर सुशोभित सोमचन्द्र हुआ। राज करके समस्त शत्रु वर्ग को जीत कर पवित्र भूमि को मुक्ति क्षेत्र बना दिया।

१५. सोमचन्द्र का पुत्र दुःखों को दूर करने वाला, शरणागत रक्षक, सुविचक्षण, दानवीर, रणधीर, कलाधर असमर्क पृथ्वी पर शक्रेन्द्र जैसा नरेश्वर हुआ।

१६. उसका पुत्र अजगर्त्त सरस्वती का भक्त, सरस सुकवि, तत्त्वार्थ में अनुरक्त प्रबल शत्रु समूह के विस्तार को नाश करने वाला, सुकृत कर्मों के द्वारा अपने राज्य का विस्तारक था।

१७. अजगर्त्तचन्द्र का पुत्र सुप्रसिद्ध, समस्त सुभटों का परिवार बढाने वाला, विमल मति वाला सुशर्म राजा हुआ। वह कामदेव के सदृश रुपवान् और पृथ्वी खण्ड का मण्डन देव तुल्य था।

१८. वह सबल सैन्य लेकर अति कुटिल कोपरस भाव संदृप्त, विषम युद्ध कला की लीला से भूषित सुभट्टों के विविध शब्द से रुद्र के समान अट्टहास करता हुआ कुरुक्षेत्र को पहुँचा।

Jain Educational International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

१९. श्रेष्ठ युद्ध कला में सुभटों से संपृक्त विमल कुरुक्षेत्र में पार्थ अर्जुन के साथ नाना प्रकार से भिड़कर स्वर्ग को प्राप्त हुआ और वहाँ ललनाओं के विविध विलास में संरक्त हुआ।

२०. इक्कीस हजार आठ सौ सत्तर रथ, उतने ही हाथियों के गर्जारव के साथ भुजबल सनद्ध सुभट थे। पैंसठ हजार छः सौ दश अश्वारोही, एक लाख नौ हजार तीन सौ साठ पदाति वीरों का चमचमाहट करता अक्षौहिणी सैन्यदल एकत्र कर सुशर्म राजा ने समराङ्गण में अर्जुन के साथ अच्छी तरह युद्ध किया।

२१. सुशर्मचन्द्र का पुत्र शूरशर्म संग्राम और ललनाओं में सुरक्त त्रिगर्त्तेश्वर राजा भवन में स्तुत्यमान हुआ।

२२. उसके बाद हरिचंद राजा हरिश्चन्द्र नरेश्वर की भाँति सत्वशील था। वह घोड़ों सहित दान वितरण कार्य में महीमण्डल में विख्यात हुआ।

२३. हरिचन्द राजा का पुत्र गुप्तिचन्द्र नृप विपुल बलवान हुआ। वह सोम का वंशज गुप्तिचन्द्र लक्ष्मी और चन्द्रमा की भाँति जनता को प्रमोदकारी हुआ।

२४. रूप में लक्ष्मीपुत्र प्रद्युम्न-कामदेव को भी पराजित करने वाला ईशान चन्द्र राजा हुआ। उसका पुत्र वजड़चन्द्र राजा अपने सद्गुणों से सुप्रसिद्ध हुआ।

२५. वजड़चन्द्र का पुत्र नाहड़चंद धर्म-धुरा का उद्धार करने वाला, म्लेच्छ सेन्यों का क्षय करने वाला भुवन में पूज्य हुआ।

२६. सोमवंशी पृथ्वीपति नाहड़ की कामनाएं अम्बिका पूर्ण करती थी। वह म्लेच्छ मीर को मारने में यमराज जैसा था, अपने देश में हर्ष पूर्वक राज्य किया करता था।

२७. अन्धकार नाशक सूर्य सदृश दैदीप्यमान सत्यपुर महावीर के पास ही नगर-नगर में कूप, सरोवर, वापी और भवन अति सुन्दर बनवाये।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

२८. जिनेश्वर के धर्म मार्ग में लवलीन, जिसका यश देश में चन्द्र की भाँति उड़ता हुआ भ्रमण करता है, दान-पुण्य, क्षमाशील स्तुत्य नाहड़चन्द्र राजा शुचिकर हुआ।

२९. एक रात्रि में प्रासाद निर्मित कर वहाँ ऋषभनाथ और अम्बिका को स्थापित किया। काँगड़ा दुर्ग में तीर्थ की रचना कर नाहड़ राजा उसे विकसित कर स्वर्ग प्राप्त हुआ।

३०. नाहड़चन्द्र नरेन्द्र का नन्दन अश्वत्थामा नरपति शत्रु वृन्द का नाश करनेवाला सब रसज्ञ (रस शास्त्र के जानकार) विद्वानों को कृतार्थ करने वाला था।

३१. नरेन्द्र श्रेष्ठ अश्वत्थामा ने गौड़ देश के स्वामी का दर्प चूर-चूर कर दिया। जिसने विषम रणक्षेत्र में भी त्रिनीति मार्ग का अनुसरण किया और उसकी कमलमुखी पुत्री लुणा देवी से विवाह कर तेज से प्रदीप्त होकर अपने नगर के समीप आया।

३२. उसका पुत्र खङ्गशाली नरवरेन्द्र, पृथ्वीरूपी नारी का विलासी, विद्वानों-कवीश्वरों का दारिद्र नाशक, नीति कर्मयुक्त, समस्त सुरवरों में जैसे देवाधीश इन्द्र हो वैसा यह खङ्गशाली महेन्द्र इन्द्र की तरह हुआ।

३३. उसका अंगज गोरीचन्द वसुन्धरा भोग और राज्य को अनित्य मानने वाला ईशान देव का पद भक्त भवबास—संसार में वास करने के मार्ग से विरक्त चित्त वाला था।

३४. गोरीचन्द के पुत्र इन्द्रचन्द्र नामक राजा नरनाथ हुआ जो दानवपति का क्षय करके सुरेन्द्र वर्ग का सुखकारी हुआ।

३५. इन्द्रचन्द्र का पुत्र शुद्ध धर्म करने में अनुरक्त, शिव सुखदायक भक्त, दान-मान करके प्रसन्न चित्तवाला शत्रुओं का भग्न कर मित्रों का परिपोषक था।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

३६. लक्ष्मी का निवास स्थान अपनी देह के वर्ण से प्रकाशमान कल्याण मयी शोभा वाला कल्याण रंग में गीयमान कल्याणचन्द्र सुशर्म कुल में प्रधान हुआ।

३७. कल्याणचन्द्र का प्रभावशाली पुत्र कुलचन्द्र राजा समर्थ परोपकारी और ज्वालामुखी देवी के ध्यान में रत महान् था।

३८. रणक्षेत्र का रसिक, बुद्धि-ऋद्धि से समृद्ध, प्रसिद्ध, श्रेष्ठ गुण गणों का घर रूप लावण्य की सुरेखा के समान, शत्रु बल चक्र को जीतनेवाला, पुण्य कार्य में अथक, विजय कलित चक्री रामचन्द्र कल्याणकारी सूर्य के समान हुआ।

३९. उसका पुत्र आसचन्द्र हुआ जो अमित शत्रुओं से अजेय, दान में कर्ण, पर नारी विरक्त, धर्म पुण्य ज्ञाता पुण्य से परिपूर्ण था।

४०. षट्दर्शन भक्त, शुद्ध कार्यों में संसक्त, भक्त जीवों में अनुरक्त, जिन-शाला निर्माता, रूचिर-विशाल बुद्धि वाला, शत्रुवर्ग के लिए कृतान्त, विल्लदेवी का कान्त वसुधाचन्द्र राजा हुआ।

४१. पंचपुर के स्वामी वल्ह को जीतकर अधिक प्रतापी, आदित्य के घर से स्वर्णमय छत्र को लाया और उसे ज्वालामुखी के उत्तंग भवन में निश्चल आरोपित किया, जिसने आनन्दमय भावों की वृद्धि से यश को बढा कर स्थिर किया।

४२. प्रसिद्ध वसुधाचन्द्र का पुत्र, गुण का मन्दिर, पृथ्वी रूपी नारी का पति, लक्ष्मी का घर उदयचन्द्र है जो ज्वालामुखी द्वारा महान् किया गया।

४३. उसका पुत्र जयसिंहचन्द्र ने अपने प्रताप से शत्रुओं को विदलित-नाश कर दिया, कमला केलि का निवास और विविध भावों से विलास करने वाला हुआ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

४४. जयसिंह राजा का पुत्र धराधिप जयचन्द्र हुआ जो रुद्र पद भक्त, समस्त शत्रुओं का नाशक धनवान, दान से कीर्ति विस्तारक, मित्रजन रूपी गहन वेलि वन के लिये मेघ के सदृश हुआ।

४५. कृष्ण पद भक्त, विपुल मति वाला, कीर्ति-कुमुदवन को विकसित करने में चन्द्र जैसे पृथ्वीचन्द्र राजा ने शिव मार्ग को त्याग दिया था। जैन धर्म मार्ग का ज्ञाता राजा पृथ्वी (चन्द्र) हिमकरण-चंद्र की भाँति कुलवर्द्धक हुआ।

४६. सुरराज विष्णु का श्रेष्ठ रमण (भवन) निर्मापक, शासन कार्य करने रूप पहाड़ को धारण करने की मति वाला, पुण्य कार्यों में अपना द्रव्य लगाने वाला नरवरेन्द्रश्रेष्ठ पृथ्वीचन्द्र हुआ।

४७. बाँए तरफ के हाथी के पास श्रीरमण-कृष्ण सुशोभित किया। प्रभु के पृष्ठ भाग में आसन पर पुष्पवृष्टि करता हुआ देवस्थित है। ऊंचे भुवन में जिसने महुरिओ (मधुरिपु-कृष्ण) को स्थापित किया, अपूर्व चन्द्र राजाने द्रव्य व्यय किया।

४८. पृथ्वीचंद्र का पुत्र अपूर्वचन्द्र राजा सुशर्मचंद्र के कुल में हुआ, जिसका पुत्र रूपचन्द्र वसुधा में प्रसिद्ध हुआ।

४९. रूपचन्द्र शत्रुओं के दर्प को खण्डित करनेवाला, पण्डित लोगों की बुद्धि बढ़ानेवाला और षट्दर्शन की पूजा करने में बड़ा विचक्षण था।

५०. उसने जिनेश्वर श्री वीर-महावीर प्रभु की स्वर्णमय प्रतिमा कराई और रूपेश्वर में भी अर्थ व्यय कर अपने नगर में स्थापित कर पुण्य वृद्धि की और अपनी कीर्ति सुरक्षित की।

५१. सभी राजा जिसके चरणों में नमस्कार करते हैं, कविजन कीर्त्ति पूर्ण प्रशंसा करते हैं। ज्वालामुखी के ध्यानमें अत्यन्त लीन है, उसकी कृपा से अक्षीण ऋद्धिवाला है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५२. अपनी कीर्ति के विस्तार से सारे जालन्धर मण्डल को अंजित करके नारायण के स्मरण और शुद्ध ध्यान से स्वर्ग में इन्द्र का अर्द्धासन प्राप्त किया।

४३. श्री रूपचन्द्र नरेन्द्र का पुत्र सिंगारचन्द्र उसके पाट पर बैठा। राजमार्ग में प्रविष्ठ हो वह महेन्द्र की भाँति सुशोभित हुआ। अत्यन्त दुष्ट शत्रुओं को रणक्षेत्र में जीतकर प्रसिद्ध हुआ। शिव ध्यान में रक्त गुणों में मतवाला, निर्मल चित्तवाला, सिद्ध प्रमाणित हुआ।

५४. उसका पुत्र श्री मेघचन्द्र नरेन्द्र विप्रभक्त, शत्रु सेना का क्षय करने वाला, दुष्ट म्लेच्छों के लिए सुरेन्द्र की भाँति भयकारी, नागरिक और याचक लोगों का पालन कर धर्म के रंग में रक्त था। शिवपुरी के नायक शंकरदेव की पूजा करके रण में सत्वशाली हुआ।

५५. अपनी कुलदेवी माता अम्बिका स्वामिनी के ध्यान में लगा हुआ, पर सैन्य को अत्यन्त महत्तर (विशाल) देखकर भी शत्रु से लेश मात्र भी क्षुब्ध नहीं हुआ। श्री मेघचन्द्र नरेन्द्र का पुत्र कर्मचन्द्र नरेश्वर है जो दान मान द्वारा मनोरंजक है और जिसका कवीश्वर नित्य वर्णन करते हैं।

५६. रूप में सुन्दर, तेज का मन्दिर, बल बुद्धि का समुद्र, निज सत्व तत्त्व में विचित्र चित्तवाला जिसके मनोहर मित्र हैं, उदार देवी का कान्त करमचंद मन को हरण करनेवाला कलाधर है। कांगड़ा का स्वामी याचक जनों का सुखकारी नाथ है, कामना पूर्ण करता है।

५७. श्री करमचन्द्र का पुत्र सच्चरित्र संसारचन्द्र राजा मनुष्य जन्म लेकर अपने उल्लसित प्रताप से विख्यात है।

५८. म्लेच्छ नरेन्द्र पिरोजशाह बादशाह सैन्य एकत्र कर कांगड़ा पहुँच कर गढ को घेर कर कहने लगा—मेरे सामने हिन्दू कौन टिक सकता है ?

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

५९. संसारचन्द्र रणक्षेत्र में भिड़ गया, उसने तलवारों को सान पर चढा कर तीक्ष्ण किया। पुरुषार्थ से म्लेच्छ सेना का नाश करने लगा, हाथी-घोड़े और पदाति सेना का संहार किया।

६०. घोड़े देकर दान-मान से सन्तुष्ठ कर, विग्रह के दूषण की जड़ काट कर पेरोज शाह प्रेम संपादन कर भग गया, वह रातो रात देश छोड़ कर चला गया।

६१. पेरोजशाह का पुत्र महम्मदशाह संग्राम से भग कर दिन रात कर आया। संसारचन्द्र ने शरणागत बादशाह की रक्षा कर पैत्रिक कीर्ति की रक्षा की।

६२. त्रिवेणी संगम-प्रयाग तीर्थ जाकर माघ का न्हवण किया और अपने पितरों को सन्तुष्ठ किया। वाराणसी में श्री विश्वनाथ धाम स्पर्श कर पाप-मल धोया। सुर तीर्थ—गया में सभी पूर्वजों को पिण्डदान से प्रसन्न किया। बुद्ध भगवान को नमस्कार कर समस्त पाप (नष्ट कर) अपनी देह को रंजित किया। सत्वशील त्रिगर्त्तेश्वर राजा संसारचंद्र ने भावपूर्वक तीर्थों को प्रणाम किया। फिर वे अपनी कीर्ति श्री को विस्तृत विकसित किया।

६३. राजा संसारचन्द्र का पुत्र देवंगचंद्र समस्त राजाओं का शिरोमुकुट त्रिगर्त्तेश्वर सर्वाङ्ग भाव युक्त हुआ।

६४. भोगी भ्रमर, पवित्र चरित्र वाला, महा आनंद संपूरित प्रसन्न आत्मा, कला-केलि निवास, पवित्र योग रक्त, शिव पद भक्त, सुसत्त्व चेता और

६५. श्रेष्ठ धनुर्धर, पृथ्वी को भोगने वाला, सुरक्त, अच्छे चित्त वाला, रण विद्या में मत्त, कुकर्मों से विरक्त, दानैकय वीर, पृथ्वी दान करने में सावधान सुधीर था।

६६. वह शत्रुओं के लिए काल स्वरूप, कवित्त्व रसिक, विशाल मतिवान्, विवेकी, शालीन, अत्यन्त पवित्र, मित्र वर्गों से संपूरित, लक्ष्मी का घर, धर्म मार्ग में सुन्दर हुआ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

६७ कवि जयानंद (कहता है) वह शुद्ध भाव संवासित था। भट्टदेव को घोड़ों के दान से सम्मानित किया, उस त्रिगर्त्तेश्वर राजा देवंगचन्द्र का जयानन्द ने इन्द्र की भाँति वर्णन किया।

६८. दान में कर्ण जैसा, पराक्रम में अर्जुन जैसा, सत्य में राजा युधिष्ठिर जैसा, देवों के चित्त को मोहित करने वाला सुशोभित है। मान में दुर्योधन की भाँति राजाओं से सेवित है। काव्यों में चित्त वाला राजा भोज की भाँति कविजनों से वर्णित है। गीत-कवित्त का रस ज्ञाता देवंगचन्द्र सहृदय भाव वाला है, उस संसारचन्द्र के सद्गुणी पुत्र का वर्णन करने में मन अति आनन्दित है।

६९. देवंगचन्द्र के पुत्र राजा नरेन्द्रचन्द्र का प्रमोद पूर्वक अपनी बुद्धि विस्तार से वर्णन रूप कहूँगा।

७०. राजा नरेन्द्रचन्द्र की संखिनी, चित्रणी, हस्तिनी और पद्मिनी रूप परिकलित स्त्रियाँ अपने-अपने योग्य भाव से सेवा करती हैं।

७१. संखिनी शंख के आभरण युक्त, श्रेष्ठ मोतियों के हार से नित्य भूषित रहती है। विभ्रम-विनोद कलित नरेन्द्रचन्द्र नृप की प्रशंसा करती है।

७२. संखिनी श्रेष्ठ नारी, सुन्दर गुणों वाली सारी की भाँति नृत्य करती है। उज्ज्वल रंग के बदन वाली, दीर्घनयनी, गज-गति-गामिनी, रंग में मदोन्मत्त, विषयासक्त, सुन्दर सुदृश भाव से भाव पूर्वक ताली देते हुए गाती है। अत्यन्त रंग पूर्वक त्रिगर्त्तेश्वर की वह सेवा करती है।

७३. चित्रणी विचित्र चित्र कर्म में प्रवीण, रूप में अनर्गल, कामासक्त, हाथ में वीणा लेकर गायन में लुब्ध धर्म कार्य में निश्चल और सुस्थित है।

७४. श्रेष्ठ चित्रणी कामिनी तरुण वय वाली स्वामिनी, विविध भङ्गिमाओं के साथ नमन करती है। हंस गति-गामिनी हाथ में पल्लव को धारण कर कामुक अंगों से शल्य युक्त करती है। मकरध्वज वश भूली हुई, गुण गणों से पकी हुई मल्लिका लता की भाँति सुकुमार है। हाथों में

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कङ्कण सुशोभित, विबुधजनों को मोहित करने वाली कराल काम का बोध देती है।

७५. काम पीड़ा से पागल हस्तिनी रमणी नरेन्द्रचन्द्र के सेवन के समय काम रस में सब कुछ भूली हुई सत्य ही सारे काम छोड़ कर अकेली चली।

७६. श्रेष्ठ हस्तिनी सुन्दरी, रूप की निधान, मन में हरि का ध्यान-स्मरण करके रसलुब्ध बाला विशाल ललाट वाली अपने हाथ में माला लेकर यौवन मत्त, रस संसिक्त, पवित्र तेज से दीप्त त्रिगर्त्तेश्वर नृपति को अपने मन में रति रंग के लिए एक चित्त हो कर स्मरण करती है।

७७. कमलदल की भाँति दीर्घ नयनी, विकसित पद्म-कमल की भाँति प्रफुल्लित मुख वाली और रक्तोत्पल हाथ-पाँव वाली पद्मिनी रमणी सेवा धर्म में दत्त-चित्त है।

७८. श्रेष्ठ पद्मिनी नारी गजगति-गामिनी, अपने भर्त्तार के स्मरण में रहती है। अधर व ओष्ट जिसके लाल है, श्रेष्ठ भाव भक्ति और सुपवित्र रति सार ज्ञाता है। घन पीन पयोधरा, मनोहर भाव वाली, रूप में सुन्दर दीर्घ, पुण्य से परिपूर्ण, चम्पक वर्ण वाली (पद्मिनी ने) स्वामी को रंग विलास से प्रसन्न किया।

७९. संखिनी राग-भाव पूर्वक मनोहर गीत गाती है। चित्रणी विचित्र सुन्दर गुण युक्त काव्य सुनाती है। हस्तिनी हाथों के हाव-भाव पूर्वक ताण्डव नृत्य करती है। पद्मिनी कमल मुखी-पीन पयोधरा कामित दुखों का खंडन करती है। चारों सन्नारियाँ रंग से कलित अपने गुण रूपी रस का विस्तार करती हुई अपने विज्ञान भाव पूर्वक राजा नरेन्द्र चन्द्र की सेवा करती है।

सुशर्मपुरीय नृपतियों के वर्णनात्मक छंद समाप्त हुए।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रति परिचय

यह गुटका १६॥ × १७॥ c. m. साइज का है जिसमें पत्रांक उल्लेख नहीं है। इस समय ७६ पत्र हैं, आदि—अंत के थोड़े पत्र लुप्त हैं। इसमें अनेक जैन श्रावकों के छंदादिका भी संग्रह है। सं० १५७० में भिन्न-भिन्न स्थानों में लिखा गया है। जिस कृति के पश्चात् लेखक नाम, संवत् स्थानादिका उल्लेख है वे अंश यहां उद्धृत किये जा रहे हैं।

पत्र ६ ऊद कविकृत लक्ष्मीदास छंद सं० १५७० रचित है जिसके बाद श्रावक के २१ गुण लिखकर "लि० आसराजेन" पत्र १२ लिखितं आसराज वाजपाटके वा श्री श्री जिणचंद्र तत्सिक्षः आसराजेन लिखितं वाजपाटक मभ्यंतरे लिखितमिति पत्र १८ सागरदत्त श्रेष्ठि रास गा० १४५ की पुष्पिका—

॥ संवत् १५७० वर्षे चैत वदि ७ शुक्रवासरे ॥ श्री बाजपाटक मभ्यन्तरे एषा पुस्तिका लिखिति मिति ॥ ठा० ऊदा तथा मु० आसराजेन उभौ मिलि पुस्तिका लिखिति ॥ यादृशं पुस्के दृष्टा। तादृशं लिखितं उभौ। यदि शुद्धमशुद्धं वा। उभौ दोषो न दीयते ॥१॥ लि० मु० ॥ आसराजस्य लिखितं ॥ ऊदा पठनाय ॥ शुभंभवतु ॥ ॥ श्रीबाजपाटके नमित्तोगतः ॥

पत्र १९ ॥ संवत् १५७० फागुण सुदि ४ दिने भौमवासरे। अश्वनि नक्षत्रे ॥ श्री नगरकोट तीर्थे श्री आदिनाथ अंबिका चैत्ये यात्रा कृता ॥ ऊदाकेन तोला सुतेन ॥ लिखितं ॥१॥ जालामुखी प्रासादे ॥

पत्र १९ B छः आरा स्वरूप के पश्चात्—इति अरा प्रमाणं समाप्तं ॥ लिखितं आसचंद्रेण ऊदा पठनाय ।

पत्र २० A चार श्लोकों के बाद—इति सुप्रभात चतुष्कं ॥ लिखितं ऊदा स्व पठनाय ॥ शुभं ॥

पत्र २५ B नंदियड्ड छंद ॥ शुभं ॥ लिखितं ॥ ठा० ऊदा सोहनदि मध्ये सं० १५७० वर्षे दुतीक भाद्रपद शुक्ल पक्षे ॥ १० तिथौ ॥ शुभमस्तु लेखक पाठकयो ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पत्र ३० A माधवानल कथानक—इति माधवानल कथानकं समाप्तं ॥ लिखितं । ठा० ऊदा कोठी मधे ॥ शुभं लेखकयो ।

पत्र ५५ B वज्जालग्गं—एयं वज्जालग्गं ॥ संवत् १५७० वर्षे आसोज सुदि १३ दिने बुधवासरे ॥ पुस्तिका लिखितास्ति ॥ ठा० हरिराज पु० ठा० तोला पु० ऊदा स्वनिमित्त्यार्थं ॥ बाजवाडा मध्ये ॥ श्री राज गच्छीय स्यालायं । सूराणान्वये ॥ वा० श्री देवचंद्र सिक्ष वा० श्री जिणचंद्र समीपे ॥ शुभं लेखक पाठकयो ॥ आचंद्रार्क्कि नंदतु पुस्तकं लि० आसा ॥ विनोदार्थं । लिखितं आसा ॥ शुभ ॥ ८ ॥ छ ॥

पत्र ६३ A छंद कोस ॥ इति छंद कोस समाप्त : ॥ संवत् १५७० वर्षे कार्त्तिक बदि ८ दिने ॥ बाजवाडा मध्य लिखिता पुस्तिका उदा ठकुर तोला सुत । आत्मार्थं ॥ शुभं ॥

पत्र ६६ A गाहाकोस इति मात्रिका पाठ शृंगार रस गाहाकोस: समाप्तः ॥ लि० ऊदा कालानूर मध्ये ॥ धवलगिरि समीपे ॥ विनोदार्थं पुस्तकं नंदतु ॥ संवत् १५७० वर्षे कार्तिक शुक्ल पक्षे ॥ तृतीयातिथौ ॥ शुभं लेखक पाठकयो ॥ १ कालानूर मध्ये

पत्र ७३ B विल्हण कथानक ३५ इति श्री महाकविराज विल्हण कथानकं संपूर्ण ॥ शुभं । सालकोट मध्ये लिखितै ठा० ऊदा विनोदार्थं ॥

पत्र ७८ A चौसठ विज्ञान, एवं चउसठि विज्ञान संपूण लि० गुणरत्नः ॥श्री इस गुटके के पत्र ८० B में ६ पंक्ति प्रारंभिक और अन्त ८५ B में ३-४ पंक्तियां है अंत में पत्र ७९ इति श्री सुसर्मापुरीय नृपति वर्णन छंदांसि समाप्तानि ॥ शुभं ॥ छः इस के बाद राजाओं के नाम की वंशावली ४० राजाओं के नाम (अंतिम भिन्नाक्षरों में) विभिन्न श्लोक:

॥ त्वं देव त्रिदशेश्वरार्च्चित पदस्त्वंविश्वनेत्रोत्सव :
त्वं लोकत्रय तारणैकचतुरः त्वं काम दर्प्पापहः
त्वं कालत्रय जीव भाव कथकः त्वं केवलोद्योतकः
त्वं कर्म्मारि विनाशनो प्रतिभटः त्वां नो गतिसन्मतिः ॥१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

इसके बाद भी अनेक कृतियां है, यहां केवल लेखन संवतोल्लेख का ही निर्देश किया गया है।

खरतर गच्छ की रुद्रपल्लीय शाखा का भी पंजाब देश में अच्छा प्रभाव था। जयसागरोपाध्याय की संघ यात्रा के पन्द्रह वर्ष पूर्व कांगड़ां पंच तीर्थी के नन्दवनपुर (नादौन) में अभयसूरि के शिष्य आचार्य प्रवर श्री वर्द्धमान सूरिजी ने १३५०० श्लोक परिमित 'आचार दिनकर' नामक विधिविधान का महाग्रन्थ सं० १४६८ की कार्त्तिक दीपावली के दिन रचकर पूर्ण किया था जिसमें उनके दादागुरु श्री जयानंदसूरि के शिष्य तेजकीर्त्ति ने सहाय्य किया था। उस समय नांदौन में अनन्तपाल राजा का राज्य था। इसकी ३२ श्लोकों की विस्तृत प्रशस्ति में से दो आवश्यक श्लोक उद्धत किये जाते हैं—

पुरे नन्दवनाख्येच श्री जालन्धर भूषणे
अनन्तपाल भूपस्य राज्ये कल्पद्रुमोपमे ॥२७॥
श्री मद्विक्रम भूपाला द्रष्टषण्मनु (१४६८) संख्यके।
वष कार्त्तिक राकायां ग्रन्थोयं पूर्ति माययौ ॥२८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संघपति-नयणागर-रास

(सं० १४७९ भटनेर से मथुरा यात्रा)

अब तक अज्ञात १५वीं शताब्दी के तीन तीर्थयात्रा-संघों के रास यहाँ प्रकाशित किये जा रहे है। इन रासों की एक मात्र प्रति तत्कालीन लिखित हमारे संग्रह श्री अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर में हैं। ये तोनों रास तीन तीर्थस्थानों के यात्राओं के विवरण सम्बन्धी है। ये तीनों संघ भिन्न भिन्न संघपतियों ने राजस्थानवर्ती भटनेर से निकाले थे।

संवत् १४७९ में भटनेर से मथुरा महातीर्थ का यात्री-संघ निकला था जिसके संघपति नाहरवंशीय नयणागर थे। इसमें भटनेर से मथुरा जाते व आते हुवे जो जो स्थान रास्ते में पड़े उनका अच्छा वर्णन है।

पहले पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथ को भावपूर्वक प्रणाम करके फिर मनोवाँछित देनेवाली कुलदेवी वांघुल को नमन कर कवि मथुरा तीर्थ के यात्रारंभ कराने वाले संघपति नयणागर का रास वर्णन करता है।

जंबूद्वीप-भरतक्षेत्र में भटनेर प्रसिद्ध है जहाँ बलवान हमीर राव राज्य करता है। वहां राजहंस की भाँति उभय-पक्ष-शुद्ध नाहर वंश में नागदेव साह हुए, जिनके १ खिमधर २ गोरिकु ३ फम्मण ४ कुलधर ५ कमलागर पांच पुत्र धर्मात्मा और देव-गुरु-भक्त थे। खिमधर के पुत्र के १ सूंगागर २ गुज्जा ३ गुल्लागर ४ ठक्कुर थे। गुल्ला का पुत्र डालण और उसके १ मोहिल व २ धन्नागर पुत्र हुए। मोहिल की पत्नी जगसीही की कुक्षी से उत्पन्न नयणागर कुल में दीपक के सदृश हैं जिनकी पत्नी का नाम गूजरी है। धन्नागर की स्त्री साधारण की पुत्री और वयरा, हल्हा, रयणसीह परिवार की जननी है।

एक दिन नयणागर ने संघपति विक्का, वीधउ, गुन्ना के पुत्र वइरा, भुल्लण के पुत्र, सज्जन, धन्ना के पुत्र वल्हा, हल्ला आदि परिवार को एकत्र

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

करके मथुरापुरी सिद्धक्षेत्र की यात्रा द्वारा सात क्षेत्रों में द्रव्य व्यय कर जन्म सफल करने का मनोरथ कहा। वीघउ, और वइरो के प्रसन्नतापूर्वक समर्थन करने पर वड़गच्छ के मुनिशेखरसूरि-श्रीतिलकसूरि-भद्रेश्वरसूरि-मुनीश्वरसूरि के पसाय से ऋषभदेव भगवान को देवालय में स्थापन कर गूजरी देवी के भर्त्तार नयणागर और पोपा के कुलशृंगार करमागर संघपति सहित मिती वैशाख वदि २ को संघ का प्रयाण हुआ। नाना वाजित्रों की ध्वनि से गगनमंडल गर्जने लगा, ब्राह्मण, भाट याचकरूपी दादुर-मोर शोर मचा रहे थे, एवं श्वेताम्बर मुनियों के मिस चतुर्दिक कीर्ति—धवलित हो रही थी। संघ प्रथम प्रयाण में ही लद्दोहर आ गया। फिर नौहर-गोगासर के मार्ग से हिसार कोट पहुंचे, सरसा का बहुत-सा संघ यहाँ आ मिला। छः दर्शन के लोगों का पोषण कर स्थान-स्थान पर भक्ति करते हुए संघ सहित संघपति नयणागर बहादुरपुर आये। नागरिक लोगों ने बड़े समारोह से नगरप्रवेश कराया। खेमा-गूडर ताण कर संघ का पड़ाव हुआ। दिलावरखान ने नाना प्रकार से संघपति को सम्मानित किया। अनेक उत्सवों और शान्तिक पौष्टिक विधि सहित वाजे गाजे से सं० १४७९ मिती वैशाख शुक्ल १० भृगुवार के दिन शुभ मुहूर्त्त में चतुर्विध संघ सहित श्री मुनीश्वरसूरिजो ने संघपति-तिलक किया। जेल्ही और चंभी आशीर्वाद देतीं भामणा लेती थी। संघपति नयणा-गूजरी दंपति ने जीमनवार आदि करके सुयश प्राप्त किया। शुभ मुहूर्त्त में संघपति ने भोजा के नन्दन केल्हू, दूगड़ मीहागर के पुत्र देवराज, झांझण के वंशज अर्जुन के पुत्र सांगागर और वावेल गोत्र के सिक्खा के पुत्र सोनू-इन चारों वीर पुरुषों को संघकार्य को सुचारु संचालनार्थ 'महाधर' पद पर स्थापित किए। संघपति करमा के पुत्र कालागर, धाल्हा, के पुत्र मूलराज, सिंघराज के पुत्र सरवण के पुत्र संसारचंद्रको संघपति स्थापित किए। चारों दिशाओं से अपार संघ आकर मिला, जिनशासन का जयजयकार हुआ।

बहादुरपुर से प्रयाण कर मानवनइ (मानव नदी) के तीर पर चलते हुए विषम घाटी सहारपुर होता हुआ आनन्दपूर्वक उल्लंघन कर पहाड़िय नगर पहुंचे। वहाँ से दूसरी दिशा में चलकर 'कामइधगढ' और सहारपुर

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

होता हुआ आनन्दपूवक संघ मथुरापुरी पहुंचा। दूर से ही पवित्र जिनस्तूप के दर्शन हो गए, संघपति नयणा जो मोहिल का नन्दन और गूजरी देवी का भर्त्तार था—ने संघ का पड़ाव यमुना तट पर डाला। नदी की तरल तरंगों को देखकर संघपति प्रसन्न हो गया। सीहा मलिक उदार था, जिन प्रतिमाओं के दर्शन हुए। नारियल, फलादि भेंटकर कर्पूर और पुष्पों से अर्चा की। पार्श्वनाथ-सुपार्श्वनाथ और महावीर प्रभु के न्हवण-विलेपन-ध्वजारोपणादि से पापों का नाश किया। सिद्धक्षेत्र में केवली भगवान जम्बूस्वामी के स्तूप की वन्दना की। भावभक्तिपूर्वक चलते हुए स्तूप प्रदक्षिणा देकर जन्म सफल किया और भव भव में तीन जगत के देवाधिदेव पार्श्व-सुपार्श्व-वीरप्रभु की सेवा प्राप्त हो ऐसी भावना की।

मथुरासे लौट कर निर्भय पंचानन सिंह की भांति संघसहित संघपति सहार नगर होते हुए पहाडिय नगर पहुंचे। विउहा पार्श्वनाथ को बहुमान पूर्वक नमन कर पहाड़ी मार्ग उल्लंघनकर भुवहंड पार्श्वनाथ की वन्दना कर जहाँ जहाँ से संघ आया था, अपना अपना मार्ग पकड़ा। तेजारइपुर आकर नयणागर संघपति संघ सहित हिसारकोट के मार्ग से भटनेर पहुँचे।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संघपति नयणागर रास

प्रथम भाषा

पहिलउं पासु सुपासुनाहु भाविहि पणमेवी।
अनु मणवंछिय देइ माइ वांघुल कुलदेवी ।।

नयणागर - संघपति - रासु मनरंगि भणीजइ।
मथुरापुरि - तीरत्थ - जात्र आरंभु थुणीजइ ।।१।।

जंबूदीवह भरहखेति भटनयरु पसिद्धउ।
राजु करइ हंमीरराउ भुयबलिहि समिद्धउ ।।

नाहरवंसिहि रायहंसु बिहु - पक्ख - पवित्तउ।
पुहवि पयडु नगदेउ साहु धण - कण - संजुत्तउ ।।२।।

पंच पुत्त तसु मेरु जेम अविचल घर धीर।
खिमधर गोरिकु पुरुषरयण फम्मण वर वीर ।।

कुलधर कमलागर पवीण तिणि वंसि पवित्त।
धम्मधुरंधर देवगुरुह भत्तिहिं संजुत्त ।।३।।

खिमधर पुत्त पवित्त चारि पहिलउ सुंगागरु।
गुज्जउ बीजउ पुत्तु सधरु अगणिउ गुल्लागरु ।।

चउथउ ठक्कुरु नामि दोण - जण - मण - आसासणु।
विणय विवेक विचार सार गुण धम्महं कारणु ।।४।।

गुल्लासंभवु घर - पवीणु डालणु गुणआगरु।
डालण - नंदण वेवि थुणउ मोहिलु धन्नागरु ।।

मोहिल वर घरघरणि राम जिम सीता राणी।
जगसीहो निय - पुत्त - जुत्त परिवार - समाणी ।।५।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तासु कुक्खि गुणरयणरासि हंबउ पभणीजइ ।
कुलदीपकु चहु देसि सयलि नयणउ जाणीजइ ।।
नयणा - संघपति - घरणि नाम गूजरि सुपहाणी ।
भागि सुभागिहि रयणकुक्खि गुण गउरि-समाणी ॥६॥

साधारण धिय धम्मि सधर धन्नागर घरणी ।
वयरा हल्हा रयणसीह परिवारह जणणी ।।
इय निय - परियण-कलत - पुत्त - परिवार - संजुत्तउ ।
सोहइ महियलि महिमवंतु नयणउ जयवंतउ ॥७॥

॥ घात ॥

जंबुदीविहि, जंबुदीविहि नयरु भटनयरु,
तिह राजा हंबीरवरो न्याय चाय चहुदिसि पसिद्धउ ।
तह नाहर - वंसि घरु नागदेउ खिमधरु समिद्धउ ॥
गुल्ला साख - सिंगार - करो डालणकुलिहि पवित्तु ।
धम्म - कम्म - उज्जोय - करु नयणागरु जयवंतु ॥८॥

*

द्वितीय भाषा

अन्न दिवस नयणागरिहि मेलिउ निय - परिवारु ।
त विक्कागरु संघपत्ति तहि त वीधउ बुद्धि - भंडारु ॥१॥

त गुन्ना - नंदणु अतुलबलो वइरो वीनवि ताम ।
त भुल्लण - संघपति - कुमरु त सज्जणु सच्चउ नामु ॥२॥

त धन्ना - सुतु वल्हउ सधरो त हल्लउ सुयण - सहारु ।
त निय - मनि धरि उच्छाहु घणउ वीनवियउ परिवारु ॥३॥

सिद्धखेतु मथुरापुरिय तीरथ - जात्र करेसु ।
सप्त खेति वितु वावि करे हउ जीविय - फल लेसु ॥४॥

त वीधउ वइरो वयणु सुणि मणि वियसिय पभणंति ।
जात करहु कुलु उद्धरहु जिम जगि जस पसरंति ॥५॥

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

त वडगच्छिहि मुणिसिहरसुरे सिरियतिलय सुरिराय।
तसु पट्टि भदेसरसूरि गुरो मुणिसरसूरि पसाय ॥६॥

देवालइ थिरु थप्पियउ नाभि - नरिंद - मल्हारु।
त प्रस्थानउ करि गहगहए गूजरि - तणउ भतारु ॥७॥

वइसाखह बदि बीय दिणे पोपा - कुल - सिगारु।
त करमागर - संघपति - सहिउ चालइ संघु अपारु ॥८॥

त भुंगल - मद्दल - संख - सरे गयणंगणि गज्जंति।
मग्गण-बंभण-भट्ट-मिसि ददुर मोर रसंति ॥९॥

सेयंबर - मुणिवर - मिसिहिं धवलिय चहुदिसि कित्ति।
लद्धोहरि संघु आवियउ पढम पयाणइ भत्ति ॥१०॥

त नउहर-गोगासर-पहिहिं कोटि हिसारि पहुत्तु।
सरसा-पट्टण संघु तहिं तिहि आवियउ बहुत्तु ॥११॥

त छट्ठंसण पोषइ सुपरे ठामि ठामि बहु भत्ति।
बहादुरपुरि आवियउ नयणागरु संघपत्ति ॥१२॥

त पइसारउ उच्छवि करए नयरलोउ वित्थारि।
पंच सइ गडयडहि तहिं जिण - सासण - मज्झारि ॥१३॥

॥ घात ॥

अन्न दिवसिहि, अन्न दिवसिहि मेलि परिवारु,
धर्म्मकाजु करिवा भणिय भाव भगति वीनवइ संघपति।
देवालय थप्पियउ सुहमुहुत्ति सिरि-पढम-जिणपति ॥
भट्टिय नयरह आवि करे पहुतउ नयरि हिसारि।
नयणागरु तहि आवियउ बहादुरपुरह मझारि ॥१४॥

तृतीय भाषा

खेमा गूडर ताणी ए नयरि बहादुरपुरवरिहिं।
खान दिलावर—मानू ए लाधउ नयणइ बहु परिहिं ॥१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्सवु करइ बहूतू ए विक्कम चउद गुणासियइ।
मासि वसंत वइसाखी ए भृगुवासरि तिथि दसमीए ॥२॥

सासणदेवि-पसाए संति पुष्टि करि विधिसहिय।
मंगल गायहिं नारी ए अयहव सूहव गहगहिय ॥३॥

पंच सबद विसथारी ए वादित्र वाजई महुरसरे।
चतुर-नगर-नर-नारी ए संघपति-जयजयकारु करे ॥४॥

संघविणि अनु संघपत्ति ए संघु चतुर्व्विधु मेलि करे।
सुह लगनिहि सुमुहुत्तीए तिलकु कियउ मुनीसरसुरे ॥५॥

धनु धनु जंपइ राया ए संघपति अतिहि सुहावणउ।
जेल्ही दियइ असीसा ए चंभी लीयइ भामणउ ॥६॥

जेमणवार विसाला ए संघपति नयणइ सुपरि किय।
लोय भणइ जयकारू ए गूजरिवरि जगि सुजसु लिय ॥७॥

कप्पड़ कणय कवाई ए नालकेरि संघ-पूज करे।
मग्गणजण आणंदी ए नयणइ संघपति निघुट नरे ॥८॥

संघाहिविइ सुमुहुत्ती ए चारि महाधर थापियइ।
केल्हू अति गुणवंतू ए भोजा-नंदणु जंपियइ ॥९॥

दूगड-वंसि पसिद्धू ए मीहागर संघपति-तणउ।
देवराजु पुनिवंतू ए धर्म्मकाजि महियलि थुणउ ॥१०॥

झाझण-कुलह नरिंदू ए अरजुन-संभवु सधर नरो।
सांगागरु जयवंतू ए वावेल गोत्र-पवित्र-करो ॥११॥

सोनू सुयण-सधारू ए सिक्खा-नंदनु जाणियए।
ए चारइ नरवीरा ए संघपतिकाजि वखाणियए ॥१२॥

संघपति करमा-कुमरह कालागर तह तिलकु कियउ।
धाल्हा-कुल-नह-चंदू ए मूलराजु संघपति ठवियउ ॥१३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सरवण - कुलि साधारू ए सिंघराज - नंदनु सबलो।
संसारचंदु उदारू ए संघभार हुअ धुरि धवलो ॥१४॥

चहु दिसि संघु अपारू ए मिलियउ संख न जाणियइ।
जिणसासणि जयकारू ए सयल लोय वक्खाणियइ ॥१५॥

॥ घात ॥

वंसि नाहर वंसि नाहर सगुणु संघपत्ति
नयणागरि उच्चउ करवि मेलि संघु बहु देसि हुंतउ
खेमा गूडर ताणि करे सयल - लोय - मनि वचनि वसबउ
वइसाखह सुदि दसमि दिणि महियलि महिमावंतु
तिलकु लियउ संघाहिवइ कोडि जुग्म जयवंतु ॥१६॥

चतुर्थ भाषा

सयलु संघो तह चालियओ, माल्हंतडे, मानवनइ कइ तीरि।
विषम घाटी उल्लंघि करे, सुणि सुंदरि, पहुतु पहाडिय-नयरि ॥१॥

संघु दिगंतर चालियउ, माल्हंतडे, कामइधगढ़ि संपत्तु।
सहारपुरिहि सघु गहगहिउ, सुणि सुंदरि, मथुरपुरीहि पहुत्तु ॥२॥

दूरिहि नयणिहि पेखियओ, सुणि सुंदरि, विहु जिणथूभु पवित्तु।
यमुनातीरि अवासियउ संघु, सुंदरि मोहिल-तणउ सुपुत्तु ॥३॥

तरल-तरंगिहि रंजियउ, माल्हंतडे, गूजरि-तणउ भतारु।
जिणवर-बिंब पयासई ए, सुणि सुंदरि सीहो मलिकु उदारु ॥४॥

फलनालियरिहि भेटि करे, माल्हंतडे, चरचई फूलि कपूरि।
मणह मणोरह पूरिस ए, माल्हंतडे पापु पणासिय दूरि ॥५॥

न्हवण विलेपण पूज धज, माल्हंतडे, पास सुपास जिणिंद।
वीर जिणेसर पूजियउ, माल्हंतडे, नयणागर आणंदु ॥६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

केवलि जंबूथूभु नमि, माल्हंतडे, सिद्धखेत्रहि जोहारि।
भावि भगति मोकलावई ए, माल्हंतडे, थूभ प्रदक्षण सारि ॥७॥

भलउ सहू नितु माणियउ पुणु, देजे भवि भवि निज पयसेव।
पास सुपास प्रभु वीर जिण, माल्हंतडे, त्रिजगदेवाधिदेव ॥८॥

संघपति तह हिव चालई ए, माल्हंतडे, पंथिहि पयडु अबीहु।
अरियण-गय-घड भंजई ए, माल्हंतडे, जिसउ पंचायण सीहु ॥९॥

नयर सहार आवियउ, माल्हंतडे, संघु पहाडिय थानि।
विउहा पासु नमंति करे, सुणि सुंदरि, सघपति अति बहुमानि ॥१०॥

गिरिवट नइ उल्लंघि करे, माल्हंतडे, भुवहंड पास नमेवि।
जो जिहतउ संघ आवियउ, सुणि सुंदरि सो मनि पंथु लहेवि ॥११॥

तेजारइ पुरि आवि करे, माल्हंतडे, नयणागर संघपत्ति।
कोटि हिसारह पंथु लेई, सुणि सुंदरि, देवगुरह पयभत्ति ॥१२॥

भट्टनयरि संघु आवियउ, माल्हंतडे, पइसारउ बहु भावि।
वइरो वल्हो रंजियउ, सुणि सुंदरी, मंगल धवल वधावि ॥१३॥

पूनकलस सिरि ठावि करे, माल्हंतडे, अयहव सूहव नारि।
मोहिलनंदनु चिर जयउ ए, सुणि सुंदरि, उच्छव घरि घरि वारि ॥१४॥

मथुरापुरि जिणु वंदियउ, माल्हंतड, मुनिसरसूरि पसाइ।
रयणप्पहसूरि गहगहिउ, सुणि सुंदरि, ऊलटु हियइ न माइ ॥१५॥

सहिय सुआसिणि रंजियइ, माल्हंतड, नयण दियहिं आसीस।
पुत्र-कलत्र-धण-कण-सहियउ, सुणि सुंदरि, जीवउ कोडि वरीस ॥१६॥

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संघपति लोढा खीमचंद रास

(सं० १४८७ में भटनेर से गिरनार शत्रुञ्जय यात्रा)

रिसहु नमी अतिसयह निवासो, नेमिनाहु जिणवरु अनु पासो ।।
दइ सरंति अति सुमति उल्हासो, भणिस्यउं संघपति खीमिग रासो ।।१।।

जंबूदीवि भरहवर वरखित्ते, भट्टनयरि धण - रयण - पवित्ते ।
राजु करह हंबीर नरेसरु, अरियण - गण - तम - पूर - दिणेसरु ।।२।।

तत्थ अत्थि लौढा - कुल - मंडणु, वसुह - पयडु मिच्छत्त - विहंडणु ।
माल्हउ महिमावंत वखाणि, तसु संभवु कालागरु जाणि ।।३।।

तसु अंगोभमु लखमण साहो, जसु जिणधम्मि अधिकु उछाहो ।
लखमण सुत बे अनुपम सार, देऊ भीमड सुगुण - भंडार ।।४।।

अगणिय देऊ पुत्त पवित्त, सुहगुरु - चरण - कमल अणुरत्त ।
तीह पढमु भणिय मालागरु, पुव्व तित्थ नमि किउ भवु मणहरु ।।५।।

बीउ वन्निउ तिमु ऊधरणु, खोखरु तीउ पुन्नआवरणु ।
मालागर - नंदणु धर धन्नु, मेलादे - उयरिहिं उवयन्नु ।।६।।

खीमराजु खोणियलि पसिद्धउ, विनइ विवेकि विचारि विसुद्धउ ।
देव - तत्ति गुरू - तति विदित्तउ, अणुदिणु अमल अयारि अमित्तउ ।।७।।

उदयवंत ऊधरण तणूभव, बिहु पक्खिहिं निम्मल शशि अभिनव ।
पहिलउ धम्मधोरु धनागरु, बीजउ मूमचंदु मतिमनुहरु ।।८।।

खोखर - पुत्तु पवित्तु पयंडु, भोखउ भुयतलि भविअखंडो ।
भीमड़ - अगजु झांझणु धीरु, तासु तणउ सलखणु वड़ वीरो ।।९।।

खीमराज घरणी घर लच्छे, खीमसिरी सोहइ गुण - सत्थे ।
पुत्त पवित्त पंच उपन्न, पुन्नपालु सिरिपालु रतन्न ।।१०।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पोपउ पुण्यवंतु जाणीजइ, जगि जिणराजु राय उवमीजइ।
पासचंद चंदोपम छाजइ, बालपणइ गुण गरुअड़ि गाजइ ॥११॥

माच्छरु मूमचंद्रु मल्हारो, रामचद्र भीखा - तणु सारो।
छाजू सोहिलु सलखण पुत्त, वन्नीजइं गुरूयण - पय - भत्त ॥१२॥

परियरिउ इम निज परिवारे, खीमराजु सोहइ संसारे।
संतिनाहु सिरि सिव - सुहु-करए, तडि-गोत्रज - उवसग अवहरए ॥१३॥

॥ घात ॥

पुहवि पयडउ पुहवि पयडउ महिम मज्जाय
मयरहरु लोढा - कुलिहिं मनिहाणु मालउ पसिद्धउ
कालगरु तसु तणउ तयणु सुयणु लखमणु समिद्धउ
देऊ संभवु सुकिय - निहि मालउ महियल - चंदु
तसु नदणु सलहण लहइ खीमागरु साणंदु ॥१॥

प्रथम भाषा

अह वड-गच्छि मुणिसेहरसूरे, असुहनामि जसु नासइं दूरे।
तासुपट्टि उज्जोय-करो। सिरि सिरितिलयसूरि गणहरो ॥
गुरू गुण छत्तीसह भंडारो, पाव - पंक - परिहरण - परो ॥१॥

अह भद्देसरसूरि वखाणि, रंजिय जिणि जण आगम-वाणि।
तसु पट्टिहिं पुहविहिं पयड़ो। सुगुरु मुणीसरसूरि विदीतउ
जिणि रणि मयण - महाभडु जीतउ। रत्नप्रभसरि पट्टि तसु ॥२॥

मुणिसरसूरि - वयणि जिण - धम्मु, खीमचंदु आयरइ सुरम्मु
सयल लोय सोहइ सुपरो।
अन्न-दिवसि चिंतवइ सुचित्ते वित्थारउ निम्मल-कुल-कित्ते,
सेत्तुंजि ऊजिलि जिणि नमउ ॥३॥

वलि निज परियण-स्यउं करि मंतु, संघु सयलु पूछियउ तुरंतु,
करि पसाउ सहु सावहउं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुहगुर खमासमणुत उ आपइ, हियइ कमलि सुह भावण थापइ;
राइ हंबीरि समाणियओ ॥४॥

चउदह सइ सत्यासो वरिसे, माह धवल पंचमि गुरु हरिसे;
देवालइ सिरि संति जिणु।
प्रतिठिउ पावहरणु सुह-निलउ, खोमराजु संघाहिव-तिलउ,
कुंकुंत्री पुरि पाठवए ॥५॥

देवराजु साजण संघवए, साहणु सिव रुहं (?) सुसज हवए;
सहजराजु रणसीह तह।
धोधू हीर पमुह देवाल, अवर असंख हुया सिजवाल:
बाल रमंति रासु रसिहिं ॥६॥

सेणिबद्ध सिजवाल चलंते, अति हरसिहिं खेला खेलंने,
सुयण पयक्खण संचरइ।
देहडहरि संपत्तउ जाम, सरवर - तीरि अमास्यउं ताम,
चहुदिसि चमरा ताणियइ ॥७॥

सरसा पाटण तणा महंत, जोगिणिपुर नरहडह तुरंत,
गाढ सुनाम मुलतान नयर।
उच्च ठाण सम्माण निवेस, पेरोजाबादह सुहवेस,
पुर हिसार सावय मिलिय ॥८॥

तिहि ठामह अह दिन्नु पयाणउ, राउत आल्हू किउ सम्माणउ,
धम्मी सवि मनि गहगहिय।
सुभट सवे हयवरि आरुहिय, असि-मुग्गर-घणु-तोमर-सहिय,
संघ वलावइं संचरइं ॥९॥

थलसमुद्दु हेलइ लंघंते, छप्परि चंदुपहु पणमंते,
लड्डणु नयरिहि संति जिणु।
नागपुरिहिं छहि जिणहर देव, पूज महाघज करि बहु सेव,
सुहनिवेसि आवासियउ ॥१०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुल इगारसि फग्गुण मासे, रविवासरि आणंदि उल्हासे,
उच्छरंगु उच्छलिउ जणि।
सुगुरु मुणीसरसूरि सुविसाले, खीमचंद - संघाहिव-भाले,
तिलकु कियउ तेयग्गलिहिं ॥११॥

वाजइं करडि पडह कंसाला, गहिर सरिहिं झुणि गीय झमाल,
भट्ट भणइ छप्पय सरस।
सघ पूज अइ वित्थर करए, दाणिहि मागण रोरु अवहरए,
कप्पड़-कणय-कवाइ घणि ॥१२॥

सदरथ जीमणवार विसाल, सुपरि सयल मुणिवर संभाल,
खीमसिरि रहसागलीय।
लक्खी कप्पूरो वि सुयासणि, आसीसंति हरखि सोवासिणि,
खीमचंद थिरु होह घर ॥१३॥

भंडाणइ भत्तह भयहरणी, वडकुलदेवि सेवि वर वरिणी,
तासु सेस सीसिहि धरवि।
अह फलवधिपुरि पासु पसंसिउ, रूण संति आसोप नमंसिउ,
उवएसिहि वधमाणु नमि ॥१४॥

मंडोवरि पणमिय पय पास, वीरु महेवइ पूरइ आस,
राडद्रहि नमि वीरु जिणु।
साचउरिहिं संपत्तउ संघो, वीरु नमी किउ पाय उलंघो,
न्हवण विलेवण पूज करे ॥१५॥

जिणहरि उच्छवु वार सवार, रंगि पत नाचइ किरि अपछर,
न्हवउ वीरु घिय कलसभरे।
सघणु वरइ माला ऊघट्ट, कव्व कवित्त भणइ बहु भट्ट,
जीरावलिणि (?) ऊमहिय ॥१६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ घात ॥

अह संघाहिवु सघरु सुविचारु,
संघाहिवु सुगुणनिधि संघु मेलि भट्टणयर हूंतउ।
नागउरि गुरि तिलक किउ संघपूज अति सुजस पत्तउ।
साचउरिहिं सिरि वीरजिण भुवणिहि न्हवण विसालु।
इणि परि सदरथि भुजबलिहिं भिड़ि भंजिउ कलिकालु ॥१॥

द्वितीय भाषा

रतनपुरिहिं सोलमउ जिणिंदु पणमिउ दुह-हरणु
जिराउलि पहु पासनाहु निरखिउ सुह-करणु
त्रिविध प्रदक्षण त्रिविधपूज त्रिहुकरण-संजुत्तो
खीमागरु मण-हरसियउ दाणि घण जिम वरिसंतो ॥१॥

महा पूज धज अनइ सार आवारीय भंडइं
खीमचंदु संघवइ रोरु दूथिय जण खंडइ
आबू डूंगरि धवलि पाज हेलइ आरूहए
देवलवाडउ देखि संघु हियड़इ गहगहए ॥२॥

विमलदंडनायक - विहारि रिसहेसरू नमियउ
लूणिग वसही नेमिनाहु आणंदिहि न्हवियउ
पीतलमउ झाझण-विहारि मरुदेवी-नंदणु
आगलि हय आरुहिउ विमलु देवी आणंदणु ॥३॥
विहु भुवणिहि जे जगति - माहि देउलिय जिणंद
ते सवि पूजिय पावहरण फेडण दुह - कंद
श्रीमाता आगलि विट्ठु रिसिय तिरक्खी
डूंगर - विवरिहिं अंचि देवि अरबुद मन हरखी ॥४॥
पूज अवारी धजा माल अनु इंद्र महोच्छव
पमुह सुकिय किय खीमचंद संघाहिवि नव नव
सिरीपालु परबतु अनइ बोहिथु भिमसीह
च्यारि महाधर सघरपणइ थापिया अबीह ॥५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भांडारिउ पोपउ पयंडु जिणियउ सिलहत्थो
पच्छेवाणु पारसु पसंसि नामिहिं सुकयत्थो
अचलेसर वणसिरि विसिट्ठ मंदागिणि - पमुह
संघ - लोय पिक्खेवि चलिय रेवइगिरि समुह ।।६।।

धवली वीरु नमंति संति जिणवरु वीजोयइ
कोली पुणि वरकुलि समिद्धु रतनागरु जोवइ
थीराउद्दि सिवराणि मानु दीधउ संघपत्ते
तिरिवाड़इ जिण नमइं संघु चहु भुवणिहि भत्ते ।।७।।

झंझूवाड़इ पासु नमिउ सिरि कुमरविहार
संघु उमाहिउ चित्ति घणउ भणि नेमि कुमार
वज्जाणइ वधमाणु नमी वढमाणि पहूतउ
अंचिउ जिणवरु संतिनाहु वधमाणु संजूतउ ।।८।।

साहेलइ नमि वीरु धोरु सिरिधारिहिं आवइं
खीमचंदु संघपति भत्ति संघिहिं तहिं पावइ
मेघु वलावइ लियउ सघर आवासिउ खेमि
जूनइगढि जिणहरिहिं बूढु दक्खिण करि हेमि ।।९।।

भेटिउ तहि महिपालु राणु अप्पिउ सम्माणु
रेवयगिरि आरूहइ पाज संघाहिवु जाणु
नेमिनाथ वज्रमइ बिंबु नमि दंड - प्रणामि
पापु हरिउ गयंदमइं कुंडि जलि विमलि सनानि ।।१०।।

कल्याण त्रइ त्रिहु सुठामि नमि जिणवर बिंब
आइनाहु पूजियउ संघि सेत्रुजि पडिबिंब ।।११।।

मरुदेवी अनु कवड़ि जक्खु राजल निरखंते
रहनेमी अंबा पलोइ अवलोयणि जंते
सामि पजूनह नमी नेमि जिणहरि आवंते
महापूज करि देइ सुधज दाणिहि वरिसंते ।।१२।।

Jain Educational International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्न अवारी मंडि सुथिरु जसि जगतु भरंते
रास भास खेला सुचंग रंगिहिं नाचंते
मुकलावी जिणु सेस लेइ निज सीस घरंते
वलि जूनइगढि खीमचंदु चित्तिहि हरिसंते ॥१३॥

मंगलउरि पहु पासनाहु नवपल्लव पूजिउ
देव[प]ट्टणि ससिपहु नमेवि मणि वंछी पूजिउ
अंबिक कोडीनारि नमी दीविहि पहुपासा
ऊनिहि न्हवियउ घृतकलोलु मंगल्ल - निवासो ॥१४॥

महुअइं ताराझइहि चीरु घोघिहिं नवखंडो
जो कलिकालिहि कप्परुक्खु दुह-दलण पयंडो
वालूंकडि सिरि रिसहु वीरु नमि पालीताणइ
हिव कवि सेत्रुज तित्थुराउ बहु बुद्धि वखाणइ ॥१५॥

॥ घात ॥

लंघि दुग्गम लंघि दुग्गम गरुय सुविसाल
गिरिमाल अवलोय वण-सरिय-कूअ-आराम-महु (?)-गढ
उत्तंग अइ चंगतर नर अणेग जोइय सुदिढ मढ
गिरि गरुअइ गिरनारि चड नेमिनाहु पणमंति ।
खीमागरु संघपति इम निज भवु सफलु करंति

तृतीय भाषा

गिरि कडणिहि नमि नेमि जिणु माल्हंतडे लेइ विश्रामु । सुणि०
आगलि मइंगलि आरुहिय मा० मरुदेविय अभिराम ॥१॥ सु०

अंचि संति अनु अजिय जिणु मा० अदबुद आदि प्रणामु । सु०
कवडिलु रंगि वधाविय मा० जसु अति घणु गुणग्रामु ॥२॥ सु०

अणुपमसरि जलि कलस भरे मा० पहुतउ पउलि प्रवेसि । सु०
नयण भरिय आणंद जले मा० तिलख तोरणह निवेसि ॥३॥ सु०

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पाउड़िआलइ आरूहवि मा० जगपति जिणु निरखेइ। सु०
खीमचंदु संघाहिव ए मा० दंड-प्रणामु करेइ ॥४॥ सु०

चंदनि मृगमदि कुंकुमिहिं मा० पूजइ जिणवरु भाइ। सु०
कुसुममाल किसणागरिहिं मा० सोह हुअइ जिण काइ ॥५॥ सु०

राइणि रुखु वधारि करे मा० मनि धरि अति उच्छाहु। सु०
करवि अवारिय देइ धज मा० मुकलावी जिणनाहु ॥६॥ सु०

मुकलावण मागण जणह मा० वरिसए सोवनधार। सु०
वाई चंपेसरु अवयरिउ मा० सेवक देइ सिंगार ॥७॥ सु०

ललतासर-तडि आवियउ मा० दवडिउ दूसमकालु। सु०
वलही वलि आवासियउ मा० संघाहिवु सु विसालु ॥८॥ सु०

घंघूकइ जिण वीरु थुणि मा० झंझूवाड़इ..... । सु०
.....॥९॥

नागावाड़उ निरखियउ मा० निज कित्तिहिं धवलंतु। सु०
छडिहि पयाणिहि संघपते मा० भट्टनयरि संपतु ॥१०॥ सु०

मोतीय चउक पूरावियउ ए मा० घरि घरि वंदुरवाल। सु०
पूनकलस हुउ सामुहउ मा० गीय झुणि वर माल ॥११॥ सु०
ढालइ चमर चतुर अवल मा० बाजइ वादित्र रंगि। सु०
पहिरावि संघाहिवइ मा० राइ हमीरि सुचंगि ॥१२॥ सु०

संघपूज वित्थरि करए मा० हरसिउ श्रावय लोउ। सु०
जय जयकार समुच्छलिउ मा० लोढा-कुलिहु उजोउ ॥१३॥ सु०

जा थिरु महियलि मेरु गिरे मा० गयणिहिं दिणयरु जाम। सु०
खीमचंदु परियण सहिउ मा० थिरु हुउ महियलि ताम ॥१४॥ सु०

सासणदेवि सानिधु करए मा० हरउ दुरिउ वडि माइं। सु०
खीमागरु थिरुघर जयउ मा० सउ नंदणस्यउं भाइं ॥१५॥ सु०

॥ इति श्री संघपति खीमचंद रासः ॥छः॥

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

रास-सार

अतिशय-निवास ऋषभ, नेमिनाथ और पार्श्व जिनेश्वर को नमन करके कवि खीमचंद संघपति का रास कहता है। भरतक्षेत्र में भट्टनयर में हंबीर नरेश्वर राज्य करता है। वहाँ मिथ्यात्व-नाशक लोढाकुल-मंडण माल्हउ, उसके पुत्र कालागर के अंगज लखमणसाह जैन धर्म में उत्साह वाला था। उसके देऊ और भीमड़ दो पुत्र हुए। देऊ के प्रथम पुत्र मालागर ने पूर्व के तीर्थों को नमन कर भव सफल किया। दूसरा ऊधरण और तीसरा खोखर पुण्यात्मा हुआ। मालागर की पत्नी मेलादे की कुक्षी से उत्पन्न खीमराज पृथ्वीतल प्रसिद्ध, विनय-विवेक-विचार-वान और देव-गुरु धर्म में रत तथा अमल आचार में अहर्निश निर्भय है। ऊधरण के उभय-पक्ष-निर्मल, धर्मात्मा धनागर और मूमचंद दो पुत्र हुए। खोखर का पुत्र भीखउ भी पवित्र भावना वाला था। भीमड़ का पुत्र झांझण, तत्पुत्र सलखण हुआ। खीमराज की गुणवान पत्नी खीमसिरी के १ पुण्यपाल २ श्रीपाल ३ पोपउ ४ जिणराज ५ पासचंद नामक पांच पुत्र हुए। मूमचंद का पुत्र माछर, भीखा का पुत्र रामचंद्र और सलखण के पुत्र छाजू व सोहिल थे। इस प्रकार खीमराज अपने परिवार युक्त सुशोभित है।

भगवान शांतिनाथ शिव सुख करने वाले और गोत्रजा देवी उपसर्गों का निवारण करनेवाली है। वडगच्छ में मुनिशेखर-सूरि-श्रीतिलकसूरि-भद्रेश्वरसूरि, तत्पट्टे मुनीश्वरसूरि और उनके पट्टधर रत्नप्रभसूरि हैं। मुनीश्वर-सूरि के वचनों से खीमचंद जैन धर्म के आचारों का चारुतया पालन करता था। एक दिन खीमचंद ने सोचा शत्रुंजय गिरनार की यात्रा करूं जिससे निर्मल कुल कीर्ति का विस्तार हो।' उसने अपने परिजनों से मंत्रणा करके सद्गुरु को खमासमण पूर्वक हार्दिक भावना बतलाई और राय हंबीर की ससम्मान आज्ञा प्राप्त कर, सं० १४८७ मिती माघ शुक्ल ५ गुरुवार को देवालय में शान्तिनाथ भगवान को प्रतिष्ठापित कर सभीनगरों में संघपति खीमराज ने कुंकुम पत्रिकाएँ प्रसारित की। देवराज, साजन, संघपति, सहसराज, रणसीह, धोधू, हीर, देवल आदि अगणित लोगों के श्रेणिबद्ध

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सिजवालों ने संघ प्रयाण किया। जिनभक्तिरत लोगों द्वारा प्रेक्षणीय रीति से संघ देहडहर पहुँचा। सरोवर के तट पर डेरा तंबू लगे। सरसा, जोगिणिपुर (दिल्ली), नरहड, सुनामगढ़, मुलतान, उच्च, सम्माणा, पेरोजाबाद हिसार आदि के श्रावक आ मिले। राउत आल्हू सम्मानित प्रयाण करके चले। तीर, तलवार, मुद्गरधारी अश्वारोही सुभट लोग संघ के साथ संचलित थे। थलसमुद्र को सहज में उलंघन कर छापर आये, चंद्रप्रभ भगवान को वंदन कर, लड्डणु (लाडनूं) नगर में शान्तिनाथ प्रभु के दर्शन किये। फिर क्रमशः नागपुर (नागौर) पहुँचकर छः जिनालयों में पूजा और महाध्वजारोप किया। मिती फाल्गुन शुक्ल ११ रविवार के दिन उल्लासपूर्ण वातावरण में सद्गुरु श्री मुनीश्वरसूरि ने खीमचंद के संघपति-तिलक किया। नाना प्रकार के वाजित्र वजे, विस्तार से संघपूजा हुई, याचकों को स्वर्ण, वस्त्र पौशाक से संतुष्ट किया। जीमणवार विशालरूप में होते थे। खीमसिरी विहार करते मुनियों की सार संभाल रखती थी। लक्खी और कपूरी दोनों बहिन—सुहासनियें खीमचंद को आशीष देती थी।

भंडाणइ में वड़कुलदेवी की सेवा कर उसकी सेस प्रासाद सिरोधार्य कर फलवधि पार्श्वनाथ, रूण व आसोप में शांतिनाथ, उवएस (ओसियां) में वर्द्धमान स्वामी को नमस्कार किया। मंडोवर में पार्श्वनाथ, महेवइ में वीर प्रभु, राडद्रह में तथा साचउर में पहुँचकर वीर प्रभु की यात्रा की। वहाँ न्हवण, विलेपन और पूजन कर घृत-कलशों से अभिषेक आदि विविध उत्सव किए। रतनपुर में शांतिनाथ और जीराउल में पार्श्वनाथ भगवान के महाध्वजारोप कर खीमचंद संघपति अनेक दुखियों का कष्ट निवारण करते हुए आबू गिरि पर पहुँचे। वहाँ देवलवाड़उ में विमल दण्डनायक के विहार में ऋषभदेव, लूणग-वसही में नेमिनाथ और झाझण-विहार में पित्तलमय आदीश्वर भगवान की यात्रा की। मन्दिर के आगे विमल अश्वारूढ़ है तथा दोनों मंदिरों की जगती में देवकुलिकाओं की पूजा की, श्रीमाता, विट्ठुऋषि का निरीक्षण किया, डुंगर के विवर में अबुंद देवी की अर्चा करके पूजा, ध्वजारोह और इन्द्रमहोत्सव आदि नाना उत्सव करके

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संघपति खीमचंदने १ श्रीपाल २ पर्वत ३ बोहिथ और ४ भीमसिंह को संघ के महाधर स्थापित किए। भंडारी पोपउ, जिणियउ, सिलहत्थ और पारस को संघ के पच्छेवाणु (पृष्ठरक्षक) बनाए। अचलेश्वर, वशिष्ट, मन्दाकिनी आदि स्थानों का अवलोकन कर संघ ने रैवतगिरि की ओर प्रयाण किया।

धवली में वीरप्रभु, बीजोय में शान्तिनाथ, कोली, वरकुलि, थीराउद्द, सिवराण, तिरिवाड, क्रमशः जाकर संघ ने चार जिनालयों को भक्ति पूर्वक वंदन किया। झंझुवाडा में कुमारविहार स्थित पार्श्वनाथ को वंदन कर, नेमिनाथप्रभु के दर्शनों की प्रबल भावना से संघ अग्रसर होकर वज्जाणा, वढवाणा, जाकर शांतिनाथ व वर्द्धमान तथा साहेलय (सायला) में वीर नमन कर सिधर आये। खीमचंद संघपति ने यहाँ मेघ को बुलवा लिया। जूनागढ़ पहुँचकर संघपति ने दक्षिण कर से हेम वृष्टि की। राणा महीपाल से भेंट कर सम्मानित हुआ। रैवतगिरि की पाज चढ़कर नेमिनाथ प्रभु के वज्रमय बिम्ब को प्रणाम किया। और गजेन्द्रपद कुड में स्नान किया। तीनों कल्याणक स्थानों में जिनेश्वर-बिम्बों को नमन कर, शत्रुञ्जयावतार मंदिर में आदिनाथ, मरुदेवी, कवड़यक्ष का वन्दन कर, राजुल-रहनेमि गुफा, अम्बाशिखर, अवलोयण शिखर जाते, शाम्ब-प्रद्युम्न शिखर की यात्रा कर नेमिजिनगृह आये। महाध्वजारोपण, दान-पुन्य, अवारित सत्र, रास, भास नृत्यादि भक्ति कर वापस जूनागढ़ आये। फिर मंगलउर में नवपल्लव पार्श्वनाथ, देवपट्टण (देवका पाटण) में चंद्रप्रभ को नमन कर, कोडीनार में अंबिका के दर्शन कर, दीव बंदर, ऊना आये। घृतकल्लोल, महुआ, ताराझय (तलाजा) और घोघा में नवखण्ड पार्श्वनाथ, कींकर वालूंकड में ऋषभदेव महावीर को वंदन करके संघ पालीताना पहुँचा।

महातीर्थ शत्रुंजय गिरिराज पर चढ़ते प्रथम नेमिनाथ प्रभु के दर्शन कर मइंगल (हाथी) आरोहित मरूदेवी माता को वंदनकर, कवड़ यक्ष को बधाया। फिर अनुपम सरोवर का जल कलश भर के प्रतोली में प्रवेश किया। भक्ति सिक्त हर्षाश्रु पूर्ण नयनों से तिलख तोरण और पाउड़िआलह आरोहण कर जगत पति जिनेश्वर अदबुद अजित शान्ति आदीश्वर

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

आदिनाथ के दर्शन किए, संघपति खीमचंद ने कुंकुम चंदन कस्तूरी से भावपूर्वक पूजा की। पुष्पमाला और कृष्णागरु अर्पण कर जिन भक्ति की, रायण रूंख को बधाया। अवारित सत्र देकर ध्वाजारोप किया और विदा होते समय स्वर्ण-वृष्टि द्वारा याचकों को संतुष्ट किया। फिर ललतासर के तट पर आये।

पालीताना से वलही होते हुए धंधूका आकर वीर प्रभु की स्तवना की। झूझवाडा, नागावाड़ा होते हुए क्रमशः छडिहि-शीघ्र प्रयाण द्वारा भटनेर आये। घर घर में वंदरवाल सजाए, मोतियों से चौक पूरा गया, पुण्यकलश लेकर गीत गाते हुए वाजित्रों के साथ संघपति का स्वागत हुआ। राय हमीर को संघपति ने पहरावणी दी। सर्वत्र हर्ष हुआ, लोढाकुल को उद्योत करने वाला संघपति खीमचंद शासनदेवी के सानिध्य से चिरकाल जयवंत रहे।

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org